सूचीपत्र ।

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय।

राधास्वामी मत उपदेश

वर्णन हाल सच्चे खोजी और परमार्थी और भी माया और उसकी रचना और घेर का और ज़रूरत सतगुरु और उनके सतसंग की और महिमां कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की जिन के चरनों में सब को प्रीत और प्रतीत लानी चाहिये। और बिना जिनकी मेहर और दया के किसी का कुछ काम नहीं बन सक्ता और हाल उपदेश करताओं का और नसीहत उनको और कुल्ल उपदेशियों यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों को॥

भाग पहिला

सच्चे खोजी और प्रेमी का हाल

१—सच्चे परमार्थ की कमाई दुरुस्ती से जब बन पड़ेगी, जब सच्चा दर्द यानी प्रेम सच्चे मालिक से

मिलने का दिल में पैदा होगा। और यह दर्द या प्रेम दो सूरतों में पैदा हो सक्ता है ॥

२—पहिली सूरत यह है कि दुनियां के हाल पर नज़र करके और उसकी और उसके सब सामान की नाशमानता देख कर, दिल उसकी तरफ़ से उदास हो जावे और खोज करे कि अमर अस्थान और अमर सुख कहां है और कैसे मिले और जब तहक़ीक़ात करके मालूम होवे कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धाम जो ऊंचे से ऊंचा और गहरे से गहरा है अमर और अजर है और वहीं पूरन आनन्द मिल सक्ता है, और वही निर्माया यानी निर्मल चेतन्य देश है और उसके नीचे जितने देश हैं उन सब में शुद्ध यानी लतीफ़ और सूक्षम और मलीन यानी कसीफ़ और अस्थूल माया व्यापक है और निर्मल चेतन्य का ग़िलाफ़ हो रही है। इन देशों में पूरन आनन्द नहीं है । दरजे बदरजे ऊंचे की तरफ़ आनंद बढ़ता गया है, और दुख और कलेश कम होता गया है और मलीन माया के देश में सुख बहुत कम और दुख बिशेष है । और कुल्ल माया के देश में अबेर सबेर जनम मरन का चक्कर भी चल रहा है, यानी कुछ अर्से बाद ग़िलाफ़ (जिसको देह कहते हैं)

बदलते रहते हैं। यह बात समझ कर कुल्ल मालिक के मिलने का और उस के धाम में पहुंचने का शौक़ दिल में पैदा हो जावे॥

३—दूसरी सूरत यह है कि कोई इस शख़्स को महिमा कुल्ल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी और उनके धाम की जो कि अविनाशी और सर्ब आनंद और प्रेम का भंडार है सुनावे। और इस दुनियां की नाशमानता और इसके सामान का तुच्छ और दुख-दाई होने का हाल समझावे और जुगत इस माया देश को छोड़ कर अपने निज घर में जाने की बयान करे। और इस हाल को सुन कर मन इस दुनियां से उदास और बरदाश्ता होकर घर की तरफ़ चलने और अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल से मिलने का जतन करने का इरादा करे॥

४—ऐसे खोजी को तलाश संत सतगुरु या साध गुरू की जोकि कुल्ल भेद से कुल्ल मालिक और निज घर और उसके रास्ते से वाक़िफ़ हैं, और जुगत चलने की समझा कर उसकी काररवाई करा सक्ते हैं ज़रूर करनी पड़ेगी। क्योंकि और किसी जगह या किसी मत में या विद्यावान और बुद्धिवानों के वचन से उसको तसल्ली हरगिज़ नहीं आवेगी॥

५–ऐसे शौक़ीन और खोजी की हालत ऐसी होगी कि जैसे कोई बालक अपने मां बाप से बिछड़ कर किसी ग़ैर देश और ग़ैर आदमियों में जा पड़ता है और वहां उसको किसी तरह से चैन नहीं आता चाहे कैसी ख़ातिरदारी उसकी की जावे। और मां बाप के बियोग का दर्द सताता रहता है और उनसे मिलने के वास्ते तड़प और बेकली मन में रहती है॥

६–जब ऐसा खोजी तलाश करके संत सतगुरु या साधगुरू के सनमुख आवेगा, उसको उनके बचन सुनतेही और दर्शन करतेही, निहायत प्रेम उन के चरनों में पैदा होगा। और उनके बचन जो सच्चे मां बाप यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, और उनके धाम की महिमां से भरे हुये होंगे और रास्ते का भेद और चलने की जुगत का उन में बराबर ज़िकर होगा, उसको निहायत प्यारे लगेंगे। क्योंकि उसके दिल में फ़ौरन यक़ीन हो जावेगा कि वे ज़रूर एक दिन उसको निजधाम में पहुंचा कर सच्चे मालिक से मिलावेंगे॥

७–ऐसे खोजी के मन में संसार और उसके सामान और कुटुम्ब परिवार की तरफ़ से किसी क़दर बैराग खोज की हालत में पैदा हो जावेगा। और

जब संत सतगुरु या साधगुरू के बचन चित्त देकर सुनेगा तब वह बैराग तेज़ और क़ायम हो जावेगा। और अभिलाषा दुनियां की तरफ़ से हटती और कुल्ल मालिक के चरनों में पहुंचने की दिन २ बढ़ती जावेगी॥

८—ऐसा खोजी संत सतगुरु के बचनों को सुनकर और उनके मुवाफ़िक़ अपनी और दुनियां की हालत की जांच करके, फ़ौरन उनके चरनों में प्रतीत लावैगा और जब उनकी जुगत का कोई दिन अभ्यास करके अपनी हालत अंतर में बदलती हुई देखेगा, तब दिन २ प्रीत उनके चरनों में बढ़ाता जावेगा, और तन मन धन से उमंग के साथ सेवा करेगा और शौक़ के साथ सतसंग उनका जोकि उसके अंतर अभ्यास में मदद देनेवाला है जारी रक्खेगा॥

९—जगत के जीव और भी विद्यावान और बुद्धिवान असल में अजान हैं, उनको सच्चे मालिक और उसके धाम की और उससे मिलने की जुगत की बिलकुल ख़बर नहीं है। रास्ते में आत्मा, परमात्मा या ब्रम्ह में अटक रहे हैं, और उसका भी भेद पूरा २ नहीं जानते और मिलने की जुगत ऐसी कि जिसका अभ्यास सब कोई कर सके, इनके पास

नहीं है पर यह सब संत मत का हाल सुनकर अपनी मूर्खता से उसकी निन्द्या करते हैं, और संतों पर तान मारते हैं और आप तीरथ, बरत और मूरत वग़ैरह में भरम रहे हैं। सच्चा खोजी ऐसे लोगों की निन्द्या और तान पर ज़रा भी तवज्जह नहीं करेगा। क्योंकि जब उस ने थोड़े दिन सतसंग करके संत मत को बख़ूबी समझ लिया है तो उसको सब मतों का हाल और उनका ओछापन ज़ाहिर हो जावेगा, और उन लोगों के भरमाने और भुलाने से नहीं भरमेगा बल्कि उनको नादान और अभागी समझ कर उनसे पर-मार्थी मेल नहीं रक्खेगा॥

१०–दुनियां के भोग विलास और नामवरी वग़ैरह की चाह उसके दिल में बहुत कम हो जावेगी या बिलकुल नहीं रहेगी क्योंकि उसको कोई दिन सतसंग और अंतरी अभ्यास करके साफ़ मालूम हो जावेगा कि सब चीज़ें रास्ते में अटकाने वाली और निज घर से हटाने वाली हैं। वह किसी के भरमाने और उन चीज़ों का लोभ दिलाने से नहीं भरमेगा, और अपनी भक्ती से नहीं डिगेगा॥

११–ऐसे खोजी भक्त के मन में दिन २ चाव कुल्ल मालिक के दर्शन और उसके धाम में पहुंचने का

बढ़ता जावेगा और जिस क़दर कि नित्त अभ्यास करके उसको अंतर में रस मिलता जावेगा उसी क़दर उसकी प्रीत प्रतीत चरनों में मज़बूत होती जावेगी। और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया उस पर दिन २ बढ़ती जावेगी और अंतर में उसको परचे मिलते जावेंगे। और इस तरह कमाई करके वह एक दिन माया के घेर के पार होकर और धुर धाम में पहुंच कर परम आनंद को प्राप्त होगा॥

भाग दूसरा

माया और उसके ग़िलाफ़ों का हाल

१२—मालूम होवे कि इस देश में चेतन्य की धार यानी सुरत माया के ग़िलाफ़ों में गुप्त होकर काररवाई मन और इंद्रियों के वसीले से कर रही है। और इन ग़िलाफ़ों के संग अपन पौ बांध कर, और बाहर के जड़ पदार्थों में मन लगा कर अनेक तरह के दुख सुख सह रही है। सो जब तक इन ग़िलाफ़ों से किसी क़दर छुटकारा नहीं होगा तब तक दुख सुख और जनम मरन के चक्कर से बचाव नहीं हो सक्ता। और

इन गिलाफ़ों से छूटने की जुगत सिर्फ़ संत यानी राधास्वामी मत में आसान तरीक़े से खोलकर कही है। उसकी कमाई से यह जीव अपना आहिस्तह २ छुटकारा होता हुआ आप देख सक्ता है, और उसी क़दर अपना दुख सुख से बचाव भी परख सक्ता है और किसी तरकीब से यह फ़ायदा पूरा २ और आसानी के साथ बग़ैर घर बार और रोज़गार के छोड़ने के हासिल नहीं हो सक्ता और राधास्वामी मत में किसी का घर बार और रोज़गार छुड़ाया नहीं जाता। और जो जुगत कि बताई जाती है ऐसी भारी है, कि उसके अभ्यास करने से सहज में सब काम बन सक्ता है। लेकिन थोड़ा सच्चा शौक़ और प्रेम दरकार है, फिर अभ्यास करके वही प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा, और एक दिन पूरा काम बना कर छोड़ेगा॥

१३—यह बात सच्चे परमार्थियों को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये, कि इस दुनियां में दो पदार्थ हैं एक चेतन्य और दूसरा जड़। चेतन्य वही सुरत की धार है कि जो इस देश में कुल्ल रचना की सम्हाल कर रही है, और जड़ पदार्थ की प्रेरक है बग़ैर उसके जड़ पदार्थ कुछ काम नहीं दे सक्ता। यही चेतन्य धार सत्त, और ज्ञान और आनन्द, स्वरूप

है और जड़ बरख़िलाफ़ इसके असत्त और तम और दुख रूप है यानी इस का रूप रंग सुरत चेतन्य की सत्ता से क़ायम है, और जब उसकी सत्ता खिंच जावे, तब उसके रूप रंग का अभाव हो जाता है॥

१४–यह समझौती लेकर कुल्ल सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है, कि जड़ पदार्थों से आहिस्ता २ अपना नाता तोड़ते जावें, या रिश्ता ढीला करते जावें और विशेष से विशेष चेतन्य से अपना मेल बढ़ाते जावें, तो दिन २ आनन्द और सच्चा ज्ञान बढ़ता जावेगा, और दुख और भूल और भरम यानी तम घटता जावेगा। और यह कार-रवाई दुरुस्ती और आसानी के साथ, सिर्फ़ सुरत शब्द मारग की कमाई से हो सक्ती है॥

क्योंकि और मतों में चलने और चढ़ने की आसान जुगत जारी नहीं है। वे सब या तो बाहर जड़ निशानों (जैसे तीरथ, मूरत, वग़ैरः) में अटक रहे हैं, या चेतन्य की विद्या बुद्धी सी समझौती लेकर और अपने तईं वही रूप समझ कर (यानी समान और विशेप चेतन्य का भेद न करके) जहां के तहां बैठ रहे हैं। इस सबब से उनकी न्रिवित्ती माया के

घेर और देहियों के दुख सुख और जनम मरन से मुमकिन नहीं है ॥

१५—जिस क़दर ग़िलाफ़ यानी परदा सुरत चेतन्य की धार पर, निर्मल चेतन्य देश से उतार के समय चढ़े हैं, उनका भेद मुफ़स्सिल राधास्वामी मत में बयान किया गया है। और मतों में यह भेद साफ़ तौर पर बिलकुल ज़ाहिर नहीं किया है। और सबब उसका यही है, कि उनमें सुरत के चलने और चढ़ने और निजधाम में पहुंचाने का बिलकुल ज़िकर नहीं है। चेतन्य को सर्व व्यापक मान कर, जहां के तहां उसकी समझौती (बजाय अभ्यास करने के) विद्या बुद्धी की मदद से हासिल करके तृप्त हो गये यानी बुंद चेतन्य को पिंड में हीं सिंध रूप मान कर निश्चिन्त हो गये ॥

१६—ग़िलाफ़ तीन क़िस्म के हैं, पहिले दरजे की रचना में रूहानी ग़िलाफ़, जहां कि चेतन्यही चेतन्य है और माया नहीं है। दूसरे दरजे में शुद्ध माया के मसाले के ग़िलाफ़, जहां ब्रह्म सृष्टी है और तीसरे दरजे में मलीन माया के मसाले के ग़िलाफ़ जहां कि देवता और मनुष्य और चार खान की रचना है। और फिर हर दरजे में ग़िलाफ़ों की तीन २ क़िस्में

हैं, अस्थूल, सूक्ष्म और कारन, यानी एक दरजे का अस्थूल ग़िलाफ़ नीचे के दरजे के कारन ग़िलाफ़ से भी ज्यादा सूक्ष्म है, और बाक़ी का हाल इसी तरह समझ लेना चाहिये।

१७—जब तक कि सुरत ग़िलाफ़ों में बर्त रही है, तब तक उसकी भक्ती मालिक के चरनों में भेद भक्ती कहलाती है, यानी सेवक और स्वामी, और प्रेमी और प्रीतम, यानी आशिक़ और माशूक़ का भाव क़ायम रहता है, और जब धुर पद यानी बे ग़िलाफ़ मुक़ाम में सुरत पहुंचे, तब अभेद भक्ती जिसको सच्चा और पूरा ज्ञान कहना चाहिये कहलाती है। और इस जगह पर प्रेमी को संत मत में ऐसी ताक़त हासिल हो जाती है, कि जब चाहे अपने प्रीतम से मिल जावे और जब चाहे जब न्यारा होकर उसके दर्शन का आनन्द लेवे। यह स्थान असली अरूप और अरंग और अनाम पद का है। बाक़ी नीचे के दरजों में जहां कहीं जिस किसी ने अनाम और अरूप पद थापा है, वह असली अरूप और अनाम और अरंग नहीं है। इस सबब से और मतवालों ने धोखा खाया। क्योंकि हर दरजे में हर एक अस्थान पर रूप और अरूप, और लोक और अलोक

मौजूद है, और दोनों मिलकर रचना की सम्हाल कर रहे हैं ॥

१८–चेतन्य बे ग़िलाफ़ अपने में आप मगन रहता है और जहां कि ग़िलाफ़ में है, वहां वह औज़ार यानी इंद्रियों के वसीले से बाहर की कारवाई करता है और भी अपने से विशेष चेतन्य का रस और आनन्द लेता है। लेकिन ग़िलाफ़ का संग करके यानी मेल के सबब से, जो दुख सुख लाज़िमी हैं उनका भी भोग करता है। और जब वह ग़िलाफ़ पुराना और बेकार हो जाता है, तब उसको छोड़ कर दूसरा ग़िलाफ़ धारन करता है। इस सबब से जनम मरन और दुख सुख का चक्कर हमेशा जारी रहता है ॥

यह कैफ़ियत सिर्फ़ माया देश में है यानी रचना के दूसरे और तीसरे दरजे में वाक़ा होती है। अव्वल दरजे में जहां कि रूहानी ग़िलाफ़ हैं, कभी तग़ैय्युर और तबद्दुल (अदल बदल) नहीं होता। और जोकि चेतन्य आनन्द स्वरूप है, इस वास्ते उसके ग़िलाफ़ भी आनन्द रूप हैं इस वास्ते संत फ़रमाते हैं कि जैसे बने तैसे माया के घेर के पार, दयाल देश यानी अव्वल दरजे में जाना चाहिये, तब अमर और पूरन आनन्द प्राप्त होगा ॥

भाग तीसरा

अपने वक़्त के सतगुरु की ज़रूरत और उनके सतसंग का फ़ायदा

१९—संत अथवा राधास्वामी मत में वक़्त के सतगुरु की निहायत ज़रूरत है। क्योंकि बग़ैर उनके मिलने के भेद कुल्ल मालिक और रास्ते का और जुगत चलने की और हाल उन संजमों का, जिनकी निगह-दाश्त प्रेमी अभ्यासी को ज़रूर है मालूम नहीं हो सक्ता। यह भेद और हाल वही जानता है, कि जो अपने घट में रास्ता तै करके, धुर मुक़ाम तक या किसी रास्ते के अस्थान तक पहुंचा है या थोड़ा बहुत वह शख़्स जानेगा जिसने पूरे गुरू से मिल कर, कोई दिन उनका सतसंग किया है, और उनसे उपदेश लेकर अभ्यास कर रहा है। सिवाय इन तीन के जिनको (१) संत सतगुरु और (२) साधगुरू, और (३) पूरे गुरू का सच्चा सतसंगी के और कोई यह भेद नहीं जान सक्ता। इस वास्ते जिस किसी के दिल में सच्चे मालिक का खोज, और उसके मिलने का शौक़ पैदा हुआ है, जब तक इन तीनों में से कोई नहीं मिलेगा, तब तक उसको शान्ती नहीं

आवेगी और न उसका रास्ता चलना शुरू होगा॥

२०—जब खोजी प्रेमी ऐसे गुरू का सतसंग करेगा, तब उसको सच्चा हाल इस रचना का मालूम पड़ेगा और यह कि किस में उसको सच्ची प्रीत करनी चाहिये और कहां २ उसका मन बे फ़ायदा बंध रहा है, और कैसे उसका छुटकारा सहज में हो सक्ता है। और जो सुख और रस यहां के भोगों में हैं, वह तुच्छ और नाशमान हैं, और परम सुख और परम आनंद का भंडार अपने घट में मौजूद है, पर जुगती की कमाई से आहिस्ता २ मिल सक्ता है। और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का तख़्त भी घट में मौजूद है, और किस तरह थोड़ा बहुत उनका जलवा अंतर में नज़र आ सक्ता है और कैसे उनकी मेहर और दया वास्ते तै करने रास्ता और प्राप्ती आनंद, और उसकी दिन २ तरक़्क़ी के हासिल हो सक्ती है॥

२१—सच्चे मालिक के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत सिर्फ़ सतगुरु ही के संग से पैदा हो सक्ती है। और दिन २ उसकी तरक़्क़ी उनकी मेहर और दया और जुगती की कमाई से मुमकिन है। और संसार और उसके भोगों से सच्चे बैराग का दिल में पैदा होना और उसकी तरक़्क़ी भी सतगुरुही के संग से

होवेगी। और तरह से जो किसी के चित्त में किसी वक्त थोड़ा बहुत बैराग पैदा भी हुआ, तो वह क़ायम नहीं रहेगा और न उसकी तरक्क़ी होगी॥

२२-सच्चे मालिक की मौजूदगी और उसके हर वक्त हाज़िर नाज़िर होने का यक़ीन भी संत सतगुरु ही के संग से हासिल होगा। और उनकी दया और जुगती की कमाई से वही यक़ीन बढ़ता जावेगा, और एक दिन पूरे दरजे तक पहुंचा देगा। ऐसा सच्चा और पूरा यक़ीन और किसी के संग से, या पोथियां पढ़कर हासिल नहीं हो सक्ता॥

२३-संतों की जुगती की कमाई भी सतगुरुही के संग से दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगी और, जब तक कि काम पूरा न बने वह अभ्यास जारी रहेगा। और किसी तरह सुरत शब्द का अभ्यास बन पड़ना दुरुस्ती से और तरक्क़ी के साथ जारी रहना, और रोज़ बरोज़ उसका फ़ायदा नज़र आना मुमकिन नहीं है। क्योंकि काल और करम और माया और उसके भोग बड़े ज़बरदस्त हैं, कभी न कभी अभ्यास में विघन डाल कर या भरम उठा कर, उसको छुड़वा देंगे या अभ्यासी को ललचा कर भोगों में, या मान बड़ाई में फंसा कर उसका रास्ता चलने का रोक

देंगे । जिस किसी के सिर पर पूरे गुरू का पंजा रहे उससे यह काम अख़ीर तक दुरुस्त बनता चला जावेगा नहीं तो थोड़े दिन अभ्यास करके और फिर किसी न किसी चक्कर में पड़ कर और रास्ते में थककर रह जावेगा ॥

२४–शब्द की महिमां और सुरत शब्द मारग की क़दर भी जैसी कि चाहिये सतगुरुही के संग से आवेगी और वैसे तो हर एक मत में शब्द की थोड़ी बहुत महिमां करी है, पर भेद रास्ते का और जुगत उसके अभ्यास की चढ़ाई के साथ किसी मत में नहीं पाई जाती ॥

२५–जो भाग से सतसंग सतगुरु का कुछ अर्से तक प्राप्त हो जावे, तो बहुत ग़नीमत है नहीं तो जितने दिन बन सके एक दफ़े ज़रूर उनके सतसंग में हाज़िर रह कर फ़ायदा उठावे, यानी बचन उनके चेत कर सुने और समझे, और बिस्तार करके उनका मनन और बिचार करे ॥

भाग चौथा

बर्णन भेद जीवों की समझ और अधिकार का ।

२६–जीवों की तीन क़िस्में हैं उत्तम मध्यम और

निकृष्ट, और इसी तरह बुद्धी और समझ भी तीन क़िस्म की है, एक तेलिया, दूसरी मोतिया, तीसरी नमदा (मोटा ऊनी बिछोना) ॥

(१) पहिली यानी तेलिया का ख़्वास यह है कि जैसे तेल की एक दो बूंदें पानी में डालें तो वह फैल कर तमाम पानी को घेर लेती हैं । इसी तरह उत्तम अधिकारी वचन सुनकर, उनका आपही आप विस्तार कर के समझता है, और अपने फ़ायदे की बात को छांट कर ग्रहन करता है ॥

(२) दूसरी मोतिया बुद्धी कि जैसे मोती में जिस क़दर सूराख़ किया जावे, वह उस क़दर क़ायम रहता है । यानी मध्यम अधिकारी जिस क़दर वचन सुनता है उनको वैसाही अपने मतलब के मुवाफ़िक़ छांट कर याद करलेता है, लेकिन विस्तार नहीं कर सक्ता ॥

(३) तीसरी नमदा बुद्धी, जैसे नमदे में सूये से सूराख़ किया गया, तो सूराख़ होता हुआ तो नज़र आया पर फ़ौरन ही छिप गया। ऐसे ही निकृष्ट अधिकारी वचन सुनते और समझते मालूम होते हैं, पर उनको फ़ौरन ही भूल जाते हैं ॥

२७—उत्तम अधिकारी को थोड़े दिन के सतसंग से बहुत फ़ायदा हासिल हो सक्ता है। क्योंकि वह दो मूल बात को समझकर उनका बिस्तार और अपनी सम्हाल थोड़ी बहुत हर सूरत और हर हालत में आपही अपनी निर्मल बुद्धी से कर सक्ता है। और वह दो मूल बात यह हैं।

(१) सुरत की बैठक जाग्रत के समय नेत्रों में है और यहां से धार जिस क़दर अंतर में ऊंचे की तरफ़ को शब्द और स्वरूप के आसरे खिंचेगी यानी पुतली उलटाई जावेगी उसी क़दर देह और संसार से बंधन ढीला होता जावेगा यानी इधर से बे ख़बरी और उधर की तरफ़ होशियारी के साथ, रस और आनन्द मिलता जावेगा। इस काम को ज़रूरी और मुफ़ीद समझकर जिस क़दर बन पड़ेगा उत्तम अधि-कारी हमेशा जारी रक्खेगा, बल्कि आहिस्ता आहिस्ता उस में तरक्क़ी करेगा॥

(२) मन और इन्द्रियों की धारें बाहरमुख जारी हो रही हैं, और इच्छा यानी ख्वाहिश के साथ यह धारें पैदा होती हैं और पुतली के उलटाने यानी मन और सुरत की धार को, अन्दर में

ऊपर की तरफ़ चढ़ाने में, वे तरंगों की धारें विघन कारक हैं। इस वास्ते सिर्फ़ ज़रूरी और मुनासिब तरंगें उठानी, और इंद्रियों की धारों को ज़रूरी कामों के वक्त जारी रखना, और फ़ज़ूल और ग़ैर ज़रूरी और नामुनासिब ख़्यालों और कामों की तरंगें अन्तर और बाहर रोकना, ख़ास कर अभ्यास के वक्त, और आम तौर पर हर वक्त ज़रूर चाहिये॥

इस बात को समझकर उत्तम अधिकारी, अपनी सम्हाल हर वक्त मुनासिब तौर पर रख सक्ता है। जो मुवाफ़िक़ पुराने स्वभाव और आदत के भूल और चूक हो जावे तो कुछ मुज़ायक़ा नहीं, फिर होशियार होकर सम्हाल करना चाहिये। इसी तरह कोई अर्सें की कोशिश के बाद मन और इन्द्रियां दुरुस्ती के साथ वर्तने लगेंगी॥

२९—मध्यम अधिकारी को सतसंग कुछ ज़्यादा अर्से तक करना चाहिये, तब वह बचनों को सुन कर और समझकर और थोड़ा बहुत अंतरी अभ्यास करके और भी उत्तम और मध्यम अधिकारियों का जो सतसंग अर्सा से कर रहे हैं, या सतसंग में आते जाते रहते हैं, देखकर क़ाबिल इसके हो जावेगा, कि दूर रहकर और राधास्वामी दयाल की दया का बल

लेकर अपनी सम्हाल थोड़ी बहुत कर सके । और जिस बात में कोई दिक्क़त या विघन या मुशकिल पेश आवे, तो चिट्ठी भेज कर सतगुरु से हिदायत मुनासिब वक़्तन् फ़वक़्तन् हासिल करता रहे ॥

२९–निकृष्ट अधिकारी को बहुत अर्सा तक सत-संग करने और उत्तम और मध्यम अधिकारियों की हालत देखने से कुछ फ़ायदा होगा, जो वह थोड़ी होशियारी और शौक़ के साथ इस काम को करेगा। और दूरी में उत्तम या मध्यम अधिकारी के सतसंग और मदद से, उसका भी थोड़ा बहुत निरबाह हो जावेगा, और रफ़ा २ मध्यम अधिकारी के दर्जे पर आजावेगा ॥

३०–जो लोग कि सच्चा शौक़ परमार्थ का नहीं रखते पर सच्चे शौक़ीनों के साथ किसी लपेट से, संतों के सतसंग में आ गये हैं, तो उनको भी थोड़ा फ़ायदा होगा लेकिन जब तक कि वे चेतकर होशि-यारी के साथ सतसंग और अंतर अभ्यास नहीं करेंगे, तब तक उनकी हालत नहीं बदलेगी । इन लोगों को उत्तम या मध्यम अधिकारियों का संग काफ़ी होगा, क्योंकि सतगुरु के सतसंग की ताक़त और लियाक़त उन में कम होगी ॥

३१–खुलासा यह है कि जब तक जीव का ज़बर

झुकाव संसार की तरफ़ और मन में बासना भोग और बिलास और उसकी तरक्क़ी की रहेगी तब तक वह संतों के सतसंग और उनकी जुगती के अभ्यास से गहरा फ़ायदा नहीं उठा सक्ता कि जिससे उसकी हालत जल्द बदले और परमार्थ का रस बराबर अंतर में पावे ॥

३२–जो कोई सच्चा दर्दी परमार्थी है, वह राधास्वामी मत की पोथियों को ग़ौर से पढ़कर, बहुत फ़ायदा उठा सक्ता है। और चिट्ठी के वसीले से उपदेश हासिल करके अभ्यास में राधास्वामी दयाल की दया से, भजन और ध्यान का भी रस ले सक्ता है। और अपना हाल वक़्तन फ़वक़्तन सतगुरु या उत्तम अधिकारी को लिखकर, और हिदायत मुनासिब लेकर अभ्यास में तरक्क़ी भी कर सक्ता है। पर कितनी ही बातें राधा-स्वामी मत और उसके अभ्यास की बाबत ऐसी हैं कि वे सिर्फ़ ज़बानी समझाई जा सक्ती हैं और लिखने में किसी न किसी क़िस्म की ग़लती या धोखा हो जाने का ख़ौफ़ है इस वास्ते ऐसे परमार्थी को भी ज़रूर और लाज़िम है, कि अगर ज़्यादा न हो सके, तो एक मर्तबा ज़रूर सतसंग में हाज़िर होकर और चंद रोज़ वहां ठहरकर जो कुछ कि शुभा और शक या किसी बात में समझ का फेर होवे, उसको दूर

करावे । और जो बातें कि ज़बानी समझाई जा सक्ती हैं उनको बख़ूबी समझ लेवे, ताकि उसके अभ्यास की तरक्क़ी में दूरी की वजह से ख़लल न पड़े। और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और सतगुरु और सुरत शब्द मारग की प्रीत और प्रतीत मज़बूत हो जावे ॥

३३—और जो ऐसे परमार्थी का किसी सूरत से सतसंग में आना न बन सके, तो जो वह सतगुरु का हुक्म लेकर किसी उत्तम अधिकारी परमार्थी से (जिसने कुछ अर्सा सतगुरु का सतसंग किया है) मिलैगा और कोई दिन उसका सतसंग करेगा तो उसको थोड़ा बहुत उसी क़दर फ़ायदा हासिल हो सक्ता है जैसे कि सतगुरु के संग से ॥

३४—और जो उत्तम अधिकारी का भी सतसंग प्राप्त न होवे तो जब तक कि मौक़ा सतगुरु या उत्तम अधिकारी सतसंगी से मिलने का न बने, तब तक जो मध्यम अधिकारी सतसंगी मिल जावे (कि जिसने सतगुरु का सतसंग किया है) तो उसी के संग अपनी परमार्थी कारर्वाई सतगुरु से चिट्ठी के ज़रिये से उपदेश लेकर जारी करे। इस तरह से उसको किसी क़दर फ़ायदा हासिल होगा, और मुन्तज़िर रहे कि

जब मौक़ा मिले तब उत्तम अधिकारी सतसंगी से या सतगुरु से जाकर ज़रूर मिले, और कोई दिन उनका सतसंग करके पूरा फ़ायदा हासिल करे॥

—

भाग पांचवां

कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमां, और फ़ायदा उनके चरनों में भाव के साथ प्रीत और प्रतीत करने का और बयान उन हुकमों का जो उन्हों ने ज़बान मुबारक से फ़रमाये॥

३५–राधास्वामी नाम कुल्ल मालिक का है कि जिस का धाम ऊंचे से ऊंचा है, और जहां माया का नाम और निशान भी नहीं है, और वह धाम तीन लोक के परे है और जिसके चरनों से आदि शब्द की धार निकली, जिससे कुल्ल रचना पहिले दयाल देश और फिर तीन लोक की हुई। और यह पद यानी राधास्वामी धाम और कुल्ल रचना का नमूना घट २ में मौजूद है। यानी हर एक सुरत का सूत कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों से

अपने २ घट में शब्द यानी चेतन्य की धार के वसीले से (जिस पर सुरत उतर कर पिंड में बैठी है) लग सक्ता है और वह सुरत उनकी दया को अंतर में अभ्यास के समय और भी दूसरे वक्तों में परख सक्ती है॥

३६–ऊपर के बयान का मतलब यह है कि हर एक सुरत शब्द की धार के वसीले से उतर कर पिंड में बैठी है और संत सतगुरु अथवा साधगुरू या उत्तम अधिकारी सतसंगी, से भेद रास्ते और मंज़िलों का और हर एक अस्थान के शब्द का, और जुगती चलने की दरियाफ़्त करके राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रखकर अपने घट में उसी धार को पकड़ कर चरनों की तरफ़ चल सक्ती है। और जोकि कुल्ल जीव यानी सुरतें कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की अंस हैं (जैसे सूरज और सूरज की किरन) और उनको हर एक पर निहायत दरजे की दया और प्यार मंजूर है सो जब कोई विरह और प्रेम अंग लेकर सचौटी के साथ चरनों की तरफ़ भेद लेकर चलता है वे उस पर अंतर में दया और मेहर फ़रमाते हैं, और मदद देते हैं॥

३७–इस समय में ख़ास कर जीवों पर ज़्यादा

दया करना मंजूर है। क्योंकि कुल्ल मालिक राधा-स्वामी दयाल, आप नर चोले में संत सतगुरु रूप धारन करके प्रगट हुए और भेद अपने निज धाम और उसके रास्ते और मंज़िलों का और सहज तरीक़ा चलने का कि जो आज तक किसी को मालूम नहीं हुआ, निहायत कृपा करके आप प्रगट किया। और जीवों को समझा बुझा कर, और अपनी दया के बल से उनकी सुरत को चढ़ा कर, अपने देश में पहुंचाया और पहुंचाते हैं॥

३८—और निहायत मेहर और दया करके हुक्म दिया कि जो कोई उनके चरनों में प्रेम और भक्ती धार कर उस तरीक़े का अभ्यास यानी बिरह अंग लेकर ध्यान और भजन करेगा, तो वे अपने निज रूप से उसको अंतर में बराबर मदद देकर, और उसकी सुरत को आहिस्ता आहिस्ता चढ़ा कर एक दिन धुर धाम में पहुंचादेंगे॥

३९—और यह भी हुक्म दिया कि इस वक़्त में जिस क़दर कि पुराने तरीक़े अभ्यास के हैं, वह सब ख़ारिज हैं। पहिले तो वह सिर्फ़ संजम के तौर पर जारी किये गये, दूसरे जो किसी में थोड़ी चढ़ाई का भी फ़ायदा है, सो वह इस क़दर कठिन और ख़तर-

नाक है, कि किसी जीव से दुरुस्ती के साथ उसका बन पड़ना मुशकिल बल्कि नामुमकिन है। और जो जीव कि उन्हीं तरीक़ों में अटके रहेंगे, वह बेफ़ायदा अपना वक़्त और तन मन उस काम में ख़र्च करेंगे, और सच्ची मुक्ती और पूरा उद्धार उस कार्रवाई से हरगिज़ हासिल नहीं होगा। इस वास्ते कुल्ल जीवों को यही हुकम फ़रमाया कि जो जुगत स्वरूप के ध्यान और नाम के अंतरी सुमिरन और शब्द के श्रवन की जारी फ़रमाई है, उसी के मुवाफ़िक़ बिरह और प्रेम अंग लेकर अभ्यास करो, तब सच्चा और पूरा उद्धार होगा। और किसी तरह जनम मरन और चौरासी के चक्कर से छुटकारा नहीं होगा॥

४०—और वक़्त छोड़ने इस चोले के यह भी फ़रमाया कि कोई यह न समझे कि हम जाते हैं॥

नहीं हम हर एक अभ्यासी सतसंगी के अंग संग रहकर, उसकी दुरुस्ती और तरक़्क़ी बराबर करेंगे बल्कि पहिले से ज़्यादा फ़रमावेंगे। इस वास्ते हर एक प्रेमी भक्त और सुरत शब्द के अभ्यासी को लाज़िम है, कि राधास्वामी दयाल के चरनों में गहरी प्रीत करे। और उनके चरनों की सरन लेकर, अपना अभ्यास दुरुस्ती के साथ जिस क़दर बन सके, बराबर यानी

बिला नाग़ा करता रहे, और उनकी दया मेहर अपने अंतर में परखता चले ॥

४१-और यह भी राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया कि जिस किसी को सुरत शब्द मारग का उपदेश दिया जाता है उस वक्त उसको सत्तपुर्ष राधास्वामी का दामन पकड़ा दिया जाता है। सो जो कोई सचौटी के साथ थोड़ा बहुत प्रेम अंग लेकर, उस अभ्यास को बराबर करता रहेगा, और जहां तक मुमकिन है मन के बिकारों में नहीं बरतेगा, तो उस पर सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल अपनी दया फ़रमाते रहेंगे। यानी उसके मन और सुरत को आहिस्ता २ घट में ऊंचे की तरफ़ चढ़ाते जावेंगे, और माया और काल के बिघनों से उसकी रक्षा करते रहेंगे ॥

४२-सब जीव थोड़े बहुत काल के क़रज़दार हैं, यानी उन पर पिछले अगले करम चढ़े हुये हैं। सो जो कोई सचौटी के साथ राधास्वामी दयाल की सरन में आया, और सर्व अंग करके उनका सेवक हो गया यानी और किसी में उसका परमार्थी भाव और इष्ट नहीं रहा, और सतसंग करके राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत शुरू करी है तो ऐसे जीव को वे अपनी दया से अपनाते हैं, और फिर

उसकी सब तरह से सम्हाल और रक्षा दया के साथ आप फ़रमाते हैं, और उसके करम जिस क़दर जल्दी होता है काटते हैं। और दिन २ प्रीत प्रतीत बढ़ा कर, और अभ्यास में तरक्क़ी देकर, एक दिन अपने निज धाम में बासा देंगे॥

भाग छठवां

बर्णन हाल राधास्वामी दयाल की दया का वास्ते उद्धार जीवों के, और जारी करने उपदेश के आम तौर पर॥

४३—जिस किसी को कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल अपनी दया से साध या उत्तम प्रेमी सतसंगी की गत बख़्शें, और उसके द्वारे और जीवों की परमार्थी दुरुस्ती करवावें, तो वे उनके परम सेवक होंगे। और बाहर से जिस क़दर काररवाई समझाने और बुझाने और अभ्यास में मदद देने, और भक्ती और प्रेम बढ़ाने की ज़रूर है वह उन साध या प्रेमी सतसंगी के हाथों से करवाते हैं, और अंतर में जिस क़दर कि मन और सुरत की चढ़ाई के वास्ते, और काल और करम और माया वग़ैरह के बिघनों

के दूर करने के लिये मदद दरकार है। वह मेहर और दया से राधास्वामी दयाल, अपने निज रूप से आप करते हैं। क्योंकि वक़्त उपदेश के हर एक सुरत का सूत यानी रिश्ता उसके घट में राधास्वामी दयाल के चरनों से लग जाता है। और उसी रिश्ते के द्वारे, परमार्थी अभ्यासी सुरत की प्रार्थना वग़ैरह की ख़बर, चरनों में पहुंच सक्ती है। और जब मौज होती है, तब दया की धार उसी रस्ते से उतर कर और अभ्यासी को रस देकर, उसके प्रेम को बढ़ाती है॥

४४--और जिस किसी को राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से संत गती बख़्शें यानी अपने धाम में बासा देवें तो उसका निज रूप वही हुआ जो उनका है, यानी शब्द स्वरूप करके एकता हो गई, और उसकी मौज वही होगी जो उनकी मौज है। और जो उसके द्वारे जीवों का कारज करना मंजूर है, तो वह अंतर और बाहर उनकी मौज के अनुसार, जो काररवाई जीवों के उद्धार के वास्ते मुनासिब और ज़रूर है जारी करेगा॥

४५--खुलासा यह है कि कुल्ल काररवाई जीवों के उद्धार की कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के मुवाफ़िक़ जारी होती है, और वे आप निगरानी

उस काररवाई की फ़रमा रहे हैं। और अपनी ख़ास दया जिस २ जीव पर जब २ और जैसी २ मुनासिब होती है करते हैं, और दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत चरनों में, अभ्यास के साथ बढ़ाते जाते हैं॥

४६-इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो राधास्वामी मत में शामिल हैं, चाहिये कि उनके चरनों का इष्ट मज़बूत बांधें, और उनके धाम में पहुंचने का इरादा ऐसा पक्का करें, कि रास्ते में किसी अस्थान पर थक कर या ललचा कर ठहरने की ख़्वाहिश न होवे। और जो जुगत चलने और चढ़ने की यानी ध्यान और भजन की उन्होंने जारी फ़रमाई है, उसका अभ्यास बराबर नेम और प्रेम के साथ हर रोज़ करते रहें, और जब २ मौक़ा मिले सतसंग भी करते रहें। और संसय और भरम दूर करके प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते रहें, तो राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से, आहिस्ता २ उनका कारज बन जावेगा॥

भाग सातवां

और ऽ

प्रेमी सतस हरी आदाब और क़ायदा भक्ती

जिस क़दर स्वामी दयाल के चरनों में॥

और काल औं को जो राधास्वामी मत में शामिल हैं,

मुनासिब और लाज़िम है कि जहां तक बन सके, एक दफ़ा आगरे में आकर राधास्वामी बाग़ में, राधास्वामी दयाल की समाध और उनके निशानों का, जैसे पलंग और कुरसी और भजन करने की चौकी का, भाव सहित दर्शन करें। और वहां मत्था टेक कर अपना भाग बढ़ावें और समाध पर हार फूल चढ़ावें, क्योंकि इन सब चीज़ों में जोकि उनकी सेवा में रही हैं, उनके चरनों की निर्मल और अमृत की धारा मौजूद है। राधास्वामी बाग़ के कुए का जो जल है, वह राधास्वामी दयाल का मुखामृत और चरनामृत है, उसको ज़रूर पान करें॥

४८--राधास्वामी दयाल ने खुद अपनी ज़बान मुबारक़ से फ़रमाया, कि जो कोई राधास्वामी बाग़ में आवेगा, उसको भजन करने की बराबर फ़ायदा होगा। और जो वहां बैठ कर भजन और ध्यान करेगा उसको विशेष फ़ायदा हासिल होगा, यानी राधास्वामी दयाल की ख़ास दया और मेहर का अधिकारी होगा॥

भाग आठवां

बर्णन हाल उपदेश करताओं का और हिदायत मुनासिब उनके वास्ते ॥

४९--जो कोई राधास्वामी दयाल के सेवकों में से जीवों को राधास्वामी मत का उपदेश देता है उसके साथ उसके उपदेशी जो साध भाव का बर्ताव करें, तो मुज़ायक़ा नहीं। पर गुरू और सत्तगुरु और संत भाव कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में लाना चाहिये ॥

५०--और जो कोई बिल्फ़र्ज़ किसी उपदेशक सतसंगी के साथ, अपनी हठ से गुरू भाव का बर्ताव करे तो ख़ैर लेकिन कुल्ल मालिक और परम पुर्ष पूरन धनी का भाव, राधास्वामी दयाल के चरनों में ज़रूर लाना चाहिये इस में उसका कारज बहुत दुरुस्ती के साथ और निरबिघन बनेगा, क्योंकि राधास्वामी दयाल की मेहर और दया उसकी सम्हाल और रक्षा करेगी ॥

५१--जो कोई सतसंगी अभी आपही अभ्यासी है, और इजाज़त और हुकम के साथ, दूसरों को उन से उपदेश दिलवाया जाता है, तो उनको मुनासिब

है कि किसी अपने उपदेशी को अपने साथ साध-भाव का वर्ताव न करने दें। सिर्फ़ इस क़दर काफ़ी होगा कि वे उसको अपना बड़ा भाई समझें। और जो कोई उपदेशक सतसंगी बनज़र अपने बचाव के इस क़दर वर्ताव भी मंजूर न करे, तो वह अपने उपदेशियों के साथ बराबरी यानी मित्र भाव का वर्तावा जारी रक्खे और जो कोई उपदेशक सत-संगी किसी क़िस्म की बड़ाई का वर्तावा न मंजूर करे, तो उसके उपदेशियों को चाहिये कि उसके साथ मित्रभाव वर्तें, और साध भाव या बड़े भाई का भाव न वर्तें। और संत सतगुरु और कुल्ल मालिक का भाव राधास्वामी दयाल के चरनों में लावें॥

५२--राधास्वामी दयाल के किसी सेवक को, जो जीवों को उपदेश राधास्वामी मत का देता है, किसी सूरत में अपने उपदेशियों पर दावा गुरुवाई का बांधना नहीं चाहिये। यह स्वभाव और दस्तूर संसारी यानी लोभी और मानी उपदेश करताओं का है। जो यही हालत राधास्वामी दयाल के सेवक की हुई तो वह भी संसारी गुरुओं में दाख़िल हुआ। फिर उसके उपदेश से जीवों को असली फ़ायदा बहुत कम होगा यानी उनके मन की गढ़त बिलकुल नहीं हो-

वेगी । और इस सबब से अभ्यास में तरक्की भी नहीं होगी और करम भरम और संसय भी दूर नहीं होंगे क्योंकि लोभी और मानी गुरू अपने सेवकों से आप डरता रहता है, कि कहीं उसको छोड़ न देवें जिससे उसकी आमदनी में ख़लल पड़े ॥

५३--राधास्वामी मत में गुरु, सतगुरु और संत नाम कुल्ल मालिक का है, और उपदेश करता का दरजा साध या बड़े भाई या मित्र के मुवाफ़िक़ होना चाहिये और इसमें भी उपदेश करता को लिहाज़ रखना चाहीये कि अपनी हालत को परखता चले और मान बड़ाई और धन की चाह लेकर उपदेशियों से साध भाव का बर्तावा मंज़ूर न करे नहीं तो धोखा खावेगा । और उस के उपदेश से जीवों को भी कुछ फ़ायदा हासिल न होगा ॥

५४--कोई अपने आप से गुरू नहीं बन सक्ता है। जब उपदेशियों को उसकी निसबत ऐसा भाव आवे, और वे उसके मुवाफ़िक़ उस्से बर्तावा करना चाहें, तो भी उसको मुनासिब है कि जहां तक बने अपना बचाव करे। और जो वे निहायत दरजे की हठ करें, तो उनके प्रेम और भक्ती के बढ़ाने के वास्ते, उनकी उमंग सी कम दरजे की सेवा मंज़ूर करे । और

होशियारी और एहतियात रक्खे कि उसका मन फूलने न पावे, यानी गुरुवाई का अहंकार न लावे, और किसी बात में बेएहतियाती और बेपरवाही और निडरता के साथ वर्ताव न करे, नहीं तो अपना अकाज करेगा। और जीवों को भी उस्से थोड़ा बहुत परमार्थी और दुनियावी नुक़सान पहुंचेगा॥

५५--जो उपदेश करता आप सच्चा परमार्थी है, वह आप भी निरबंध होने का जतन करता रहेगा और अपने उपदेशियों के भी बंधनों को सहज २ ढीला करता और काटता जावेगा। न कि उपदेशियों के संग अपने वास्ते नया बंधन पैदा करेगा, और उन पर दावा गुरुवाई का बांध कर ज़ोर चलावेगा, या किसी तरह की उन की तहक़ीक़ात और तलाश में (जो उनके मन में अभी पूरी प्रतीत राधास्वामी मत की नहीं आई है, या किसी तरह के शक और शुभे बाक़ी हैं, या किसी और इष्टों में उनका मन अभी बंधा हुआ है) हर्ज और ख़लल डालेगा, इस ख़ौफ़ से कि कहीं वह उसको छोड़ न जावें, और उस की मान बड़ाई और आमदनी में घाटा न होवे॥

यह हालत संसारी और नसली गुरुओं की है, और जो कोई ऐसा वर्ताव करेगा, उस्से जीवों का कारज

कुछ नहीं बन सकेगा। और न उनकी टेक पिछले इष्टों और करम धरम की काटी जावेगी, और न राधास्वामी मत की पूरी प्रतीत आवेगी और न राधास्वामी दयाल के चरनों का पक्का और सच्चा इष्ट बंधेगा॥

५६--जो हाल कि ऊपर लिखा गया अभ्यासी सत संगियों का है जिन्हों ने मान बड़ाई और धन और भोगों के लालच से बग़ैर हुक्म और इजाज़त के उपदेश करना शुरू कर दिया है, या थोड़ी सी इजाज़त ख़ास शर्तों के साथ हासिल करके, और फिर उन शर्तों को भूल कर, मनमुखता के साथ काररवाई उपदेश की आम तौर पर जारी कर दी है। इन लोगों को अपने परमार्थी फ़ायदे का ख़्याल पेश नज़र रख कर ऊपर की हिदायत के मुवाफ़िक़ अमल दरामद करना चाहिये और जो कोई उनको उनकी नाक़िस काररवाई से आगाह करके सलाह मुनासिब देवे उसका बचन प्यार भाव से सुन कर और अपने मन में ग़ौर और बिचार करके मानना चाहिये, न कि उससे नाराज़ होकर और उसको ईर्षावान समझ कर, अपने उपदेशियों का ग़ोल जुदा बांध कर और सतसंग से अलहदह हो-कर, अपनी गुरुवाई न्यारी चलाना॥

५७—जो कितने ही साधू या गृहस्थ सतसंगी इसी तरह की काररवाई करेंगे, तो बहुत से जुदे २ ग़ोल हो जावेंगे, और एक दूसरे का आपस में इत्तफ़ाक़ न होगा। और जो वे साधू या गृहस्थ सतसंगी अपने आप को गुरू और सतगुरू थाप कर अपनी पूजा और मानता जुदी जारी करेंगे, और राधास्वामी दयाल की संगत और गुरुद्वारे से जो आगरे में है अपना तअ़ल्लुक़ न रक्खेंगे या मेल मिलाप छोड़ देंगे तो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट और उनके चरनों की भक्ती आहिस्तह २ कम या गुम हो जावेगी। इस में बड़ा भारी हर्ज राधास्वामी मत के प्रकाश में वाक़ै होगा, और यह भारी नुक़-सान उनके सबब से पैदा होगा, जो ऐसी काररवाई मनहठ और अहंकार और खुद मतलबी की वजह से शुरू करेंगे, और समझौती पाने पर भी उस को अपने तौर से जारी रक्खेंगे॥

५८—मुनासिब तो यह है बल्कि हर एक राधा-स्वामी मत के सतसंगी पर फ़र्ज़ है, कि जो २ राधा-स्वामी दयाल का इष्ट रखते हैं, और राधास्वामी धाम में पहुंचना चाहते हैं, वे सब आपस में भाई चारे के तौर पर बर्ताव करें और एक दूसरे से भाव

और प्यार के साथ पेश आवें न कि अपने २ उपदेशक की टेक बांध कर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट भी ढीला कर दें, और एक दूसरे की इर्षा करके आपस में विरोध पैदा करें। यह बड़ी लज्जा की बात है, और इस मत पर जो कि आम भाई चारे का रिश्ता मज़बूत करने वाला है भारी इल्-ज़ाम लाती है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के बरख़िलाफ़ है ॥

भाग नवां

हिदायत उपदेशियों को

क़िस्म पहिली

साधू और सतसंगियों के उपदेशियों को ॥

५९—जिस किसी के मन में सच्चे मालिक के मिलने और अपने पूरे उद्धार कराने की चाह है उस को चाहिये कि जहां तक मुमकिन होवे संत सतगुरु या साध-गुरु से उपदेश लेवे, और जो वे न मिलें तो उनके सच्चे प्रेमी सतसंगी से गृहस्थ होवे या विरक्त उपदेश लेकर अभ्यास शुरू करे, और राधास्वामी दयाल का इष्ट

बांध कर उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत बाढ़वे। वे अपनी मेहर से उसका संजोग संत सतगुरु या साधगुरू से जब मुनासिब होगा मिला देंगे ॥

६०—जो उसके मन में उमंग सेवा की पैदा होवे, तो तन और धन की सेवा राधास्वामी मत के साधू और सतसंगियों की भाव के साथ करे, लेकिन मन राधास्वामी दयाल के चरनों में लगावे ॥

६१—उपदेश करता को वक़्त लेने उपदेश के अपना गुरू न बनावे, लेकिन उसको साधन करने वाला समझ कर उसका प्यार और भाव के साथ सतसंग करे, और जब २ उमंग होवे और वह मंजूर करे तो तन धन की भी सेवा करे। और राधास्वामी दयाल के चरनों का इष्ट बांध कर अपना अभ्यास जारी रक्खे, और संत सतगुरु से मिलने की चाह मन में रक्खे, और जब मौज से वे मिल जावें तब उन से गहरी प्रीत करे ॥

६२—जब संत सतगुरु से मेला होगा तब इस को घट में परचे मिलेंगे, और बाहर से भी सतसंग में में इसको रस विशेष आवेगा, और संसय और भरम सहज में दूर होते जावेंगे, और प्रीत और प्रतीत कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में और भी सुरत

शब्द मारग की बढ़ती जावेगी। इसी तरह आहिस्ता २ थोड़ी २ पहिचान संत सतगुरु की होती जावेगी॥

६३--जो कोई उपदेश करता उपदेशी पर दावा गुरुवाई का बांधे, या और किसी क़िस्म का ज़ोर या हुक्म चलावे या उसको खोज और तलाश से बाज़ रक्खे और उसके संग से सच्चे परमार्थी की हालत थोड़ी बहुत न बदले, यानी प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती न जावे, और संसार की तरफ़ से किसी क़दर बैराग या उदासीनता चित्त में न आवे, तो उस उपदेशक को सच्चा गुरू नहीं समझना चाहिये, उसके संग से उपदेशी का सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होगा। ऐसी सूरत में उपदेशी को ऐसे उपदेशक के साथ सिर्फ़ साधभाव मानना चाहिये और पूरे गुरू का खोज वास्ते अपने पूरे उद्धार के जारी रखना मुनासिब है। और जब तक पूरे गुरू से मेला नहीं होगा, तबतक कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल जिस क़दर मुनासिब होगा ऐसे उपदेशी की सम्हाल फ़रमावेंगे और रफ़ता २ सतगुरु से भी मेला करावेंगे॥

६४--जब संत सतगुरु मिल जावें, तौ उपदेशी सतसंगी को मुनासिब है, कि पहिले उपदेश करता से भी मेल बदस्तूर जारी रक्खे। लेकिन जो वे उसको

संत सतगुरु की भक्ती से हटावें या उसमें विघन डालें तो संत सतगुरु से अर्ज़ हाल करके, और उनकी आज्ञा लेकर, उस उपदेशकरता से आइंदा को मेल मिलाप ढीला कर दे, या जो मुनासिब होवे बिलकुल मौक़ूफ़ कर देवे ॥

६५–जो वे उपदेशकरता सच्चा शौक़ परमार्थ का रखते होंगे, तो वह आप सतगुरु से मिलेंगे और अपने उपदेशी को भी मिलावेंगे। और इसमें सबकी प्रीत परसपर बढ़ेगी, और राधास्वामी दयाल के चरनों में भक्ती ज्यादा मज़बूत होगी। और जो वे उपदेशक मानी और लोभी हैं और अपने परमार्थी नफ़े नुक़-सान का कुछ ख्याल नहीं करते, तो वे आप भी सतगुरु से नहीं मिलेंगे, और न अपने उपदेशी को मिलने की इजाज़त देंगे। और जो वह उनका कहना नहीं मानेगा, तो उस्से विरोध और लड़ाई करने को तइयार होंगे। ऐसे उपदेशक से सच्चे परमार्थी को मेल रखना मुशकिल होगा, और उनसे एक न एक दिन नाता मुहब्बत का तोड़ना पड़ेगा, और इस हालत में उस पर किसी क़िस्म का दोष नहीं आ सक्ता ॥

भाग नवां

क़िस्म दूसरी—नसीहत संतों के उपदेशियों को

६६—जिन लोगों ने कि संत सतगुरु या साधगुरू से उपदेश लिया है, उनको चाहिये कि संत सतगुरु या साधगुरू से गहरी प्रीत करें और होशियारी से उनका सतसंग करें। और जिस क़दर कि अंतर और बाहर के सतसंग और परचों वग़ैरह से पहिचान उनकी होती जावे उसी क़दर उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाते जावें और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पूरी प्रीत और प्रतीत लावें, तब कारज उनका दुरुस्त बनेगा क्योंकि निज स्वरूप संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल का एकही है॥

६७—ज़ाहिर है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सतसंग करके, और राधास्वामी मत और उसके भेद का निरनय सुनकर, पूरी प्रतीत आ सक्ती है। और फिर प्रीत भी उनके चरनों में, यानी अंतर शब्द स्वरूप में (जो उनका निज़ रूप है) की जा सक्ती है। और इस तरह अंतर अभ्यास और

बाहर का सतसंग दिन २ शौक़ के साथ जारी रह सक्ता है ॥

६८—लेकिन संत सतगुरु और साधगुरू के चरनों में एकाएक ऐसी प्रीत और प्रतीत (जब तक कि थोड़ी बहुत उनकी पहिचान न आवे) नहीं हो सक्ती और यह पहिचान उनकी दया पर मौक़ूफ़ है, चाहे वे अंतर और बाहर परचे देकर जल्द उपदेशी की हालत को (जो वह सच्चा और उत्तम अधिकारी है) बदल देवें यानी उसको थोड़ा बहुत प्रेम बख़्श देवें, या जो वह मध्यम और निकृष्ट अधिकारी है, तो बाहर सतसंग और अंतर अभ्यास कराके, आहिस्ता २ उसकी हालत बदलें। पर इन दोनों सूरतों में उपदेशी को लाज़िम और ज़रूर है, कि कुल्ल मालिक राधा-स्वामी दयाल के चरनों में पूरी प्रतीत और उनकी दया का भरोसा लावे, तो उसको हर हालत में अंतर और बाहर सहारा मिलता रहेगा, और जब २ संत सतगुरु या साधगुरू की तरफ़ से उसका मन रूखा और फीका हो जावेगा, उस वक़्त राधास्वामी दयाल उसकी मदद फ़रमावेंगे, जो वह उनकी बानी का पाठ और अंतर अभ्यास यानी ध्यान और भजन करता रहेगा॥

६९—सतगुरु स्वरूप में पूरा २ भाव और पूरी प्रतीत एक बारगी आनी मुशकिल है और फिर उसका बराबर एक रस क़ायम रहना निहायत कठिन है। इस वास्ते जो कोई दानाई के साथ चाल चलेगा, यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पूरी प्रीत और प्रतीत करेगा, तो वह किसी वक़्त सतगुरु से क़तई बेमुख नहीं होगा, क्योंकि देह रूप से सतगुरु और राधास्वामी दयाल जुदा मालूम होते हैं, लेकिन निज रूप यानी शब्द स्वरूप उनका एकही है। तो जब कोई सतगुरु से रूखा फीका हो गया, और राधास्वामी दयाल के चरनों में उसका भाव बदस्तूर रहा, तो वह असल में सतगुरु से भी बेमुख नहीं हुआ। सिर्फ़ उनके देह स्वरूप की तरफ़ उसका भाव घट गया, और ज़ाहिरी बर्ताव में रूखा फीका हो गया, पर उनके शब्द स्वरूप को, जो राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत रही आई, बदस्तूर पकड़े रहा, और उस्से बेमुखता नहीं हुई। इस सूरत में अंतर अभ्यास और बानी का पाठ करने से, जल्द या थोड़ी देर के बाद, उसकी प्रीत सतगुरु के देह स्वरूप में राधास्वामी दयाल की दया से बदस्तूर हो जावेगी॥

७०—इस वास्ते कुल्ल उपदेशी यानी सतसंगियों पर

फ़र्ज़ है, कि अपने फ़ायदे के वास्ते कुल्ल मालिक राधा-स्वामी दयाल के चरनों में गहरी और पूरी प्रतीत और प्रीत करें, और सतगुरु स्वरूप में भी जहां तक बन सके पूरा प्यार और भाव लावें, और उनके देह स्व-रूप को ऐसा समझें कि राधास्वामी दयाल अपने निज पुत्र यानी निज धारा के वसीले से आप उस स्वरूप में प्रवेश करके उनका कारज जिस क़दर कि बाहर से सवांरना मंजूर है बनाते हैं, और अन्तर में अपने निज रूप यानी शब्द स्वरूप से सम्हाल करते हैं॥

७१—और राधास्वामी दयाल के देह स्वरूप में, जो उन्होंने धारन करके राधास्वामी मत का प्रकाश किया और सहज जुगत मन और सुरत के चढ़ाने की सुरत शब्द मारग से (जिस से जीव का सच्चा उद्धार मुम-किन है) प्रघट करी, पूरा भाव और प्यार लाना चा-हिये और बारम्बार उनका शुकराना अदा करना चाहिये कि अति दया करके, वास्ते जारी रखने उपदेश और उद्धार जीवों के, संत सतगुरु और साधगुरू और प्रेमी सतसंगी बनाते और पैदा करते जाते हैं। अगर संत सतगुरु के स्वरूप को पिता माना जावे तो राधास्वामी दयाल के स्वरूप को महापिता मानना चाहिये, क्योंकि वे संत सतगुरु और साधगुरू के बनानेवाले हैं और

पैदाकरनेवाले हैं, और उन्हीं की मौज और दया की ताक़त से यह दोनों अपनी कारवाई जारी करते हैं और उन्हीं का भरोसा रखकर जीवों को उपदेश निज धाम में पहुंचने का करते हैं, और आप भी उसी धाम के बासी हैं॥

७२–संत सतगुरु को कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का पुत्र मानना चाहिये, सो जब किसी को उनकी थोड़ी बहुत पहिचान आवे, उसको मुनासिब है कि संत सतगुरु के चरनों में पिता का भाव लावे, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में (जो संत सतगुरु के पिता हैं) परम पिता या महापिता का भाव लावे। इस तरह उसकी प्रीत दोनों स्वरूपों में (यानी देह स्वरूप और शब्द स्वरूप में) दुरुस्ती के साथ क़ायम रहेगी और बढ़ती जावेगी॥

७३–इस क़दर भेद जो ऊपर किया गया उस हालत में मानना होगा, कि जब किसी को थोड़ी बहुत परख और पहिचान संत सतगुरु की आई है। नहीं तो आम तौर पर कुल्ल सतसंगियों को, चाहे उन्होंने उपदेश संत सतगुरु से लिया है या किसी सतसंगी से मुनासिब और लाज़िम है कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक यानी परम पुर्ष पूरन धनी मान

कर, उन्हीं के चरनों में प्रेम प्रीत करें। और उनके शब्द स्वरूप में भाव और प्यार लाकर, उमंग के साथ अन्तर अभ्यास में लगें, तब आहिस्ता २ उनकी दया की परख आती जावेगी। और फिर जो उपदेशक संत सतगुरु हैं, तो उनकी गत और महिमां की भी ख़बर पड़ती जावेगी। और उन में भी भाव और प्यार उस दरजे का, जोकि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के निज और प्यारे पुत्र में लाना चाहिये, आता जावेगा॥

भाग नवां

क़िस्म तीसरी—हिदायत कुल्ल उपदेशी यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों को॥

७९—कुल्ल जीवों को जब कि वे राधास्वामी मत में शामिल होवें, और उपदेश सुरत शब्द मारग का लेकर अंतर अभ्यास में लगें लाज़िम है कि राधास्वामी दयाल को कुल्ल मालिक और कुल्ल करता और सर्व समरत्थ और प्रेम और ज्ञान का भंडार समझें। और उनके देह स्वरूप को, जो उन्होंने धारन करके राधास्वामी मत को प्रघट किया और सहज जुगत

सुरत शब्द मारग की वास्ते चढ़ाने मन और सुरत के बताई, कुल्ल मालिक राधास्वामी का औतार स्वरूप समझें, और दोनों में गहरी प्रतीत और प्रीत लावें, और उनकी मेहर और दया का आसरा और भरोसा लेकर अभ्यास शुरू करें॥

७५–और जो कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल अपने निज स्वरूप से कुल्ल के करता और धरता हैं, और कुल्ल रचना उनके आधीन है, इस वास्ते सच्चे मन से उनके चरनों की ओट और सरन लेना हर एक सतसंगी पर फ़र्ज़ है, यानी सब कामों में उनकी मौज और दया का आसरा और भरोसा रखना चाहिये और उन्हीं को अपना सच्चा हितकारी और उद्धार करता समझकर उनका इष्ट और उनके चरनों में यानी उनके निज धाम में पहुंचने का इरादा पक्का और मज़बूत करना चाहिये। तब उससे अभ्यास दुरुस्ती से बनेगा, और कुछ अंतर में रस भी आवेगा, और दिन २ तरक़्क़ी होती जावेगी, और शौक़ भी बढ़ता जावेगा॥

७६–गुरु स्वरूप में जो कि देहधारी है गहरा भाव और प्यार, जैसे कि कुल्ल मालिक के चरनों में पैदा हो सक्ता है, आना बहुत मुशकिल है, जब तक कि

सतसंग और अभ्यास करके, उनकी थोड़ी बहुत परख और पहिचान न आवे। इस वास्ते बिना पहिचान के जो कोई उनकी महिमा करेगा, वह सुनी हुई या पढ़ी हुई होगी। और जब तक कि अंतर हिरदे से भाव और प्यार न उपजेगा, तब तक भक्ति के अंगों में जैसा कि चाहिये अंतर और बाहर, दुरुस्ती और सचौटी के साथ नहीं बर्ता जावेगा॥

७७—लेकिन जब किसी को अंतर में रस और आनंद मिलेगा और शुकराने में सेवा की उमंग उठेगी उस वक़्त जो वह राधास्वामी दयाल के साथ बर्ताव करना चाहे उसको मुनासिब है, कि संत सतगुरु या साध और सतसंगी के साथ, थोड़ा बहुत, वही बर्ताव करे। क्योंकि राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है कि संत सतगुरु उनका निज रूप और साध और सतसंगी उनके देह स्वरूप हैं। जो कोई उनकी सेवा करेगा वह राधास्वामी दयाल की सेवा में शुमार की जावेगी और उसका फल यानी भक्ति और प्रेम वे अपनी मेहर से आप देवेंगे॥

—

भाग दसवां

क़िस्म पहिली—जवाब बाज़े सवालों

और संदेहों का जो कि प्रेमी अभ्यासियों के मन में निस्बत बर्ताव भक्ति के सतगुरु स्वरूप और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में अक्सर पैदा होते हैं॥

७८–जो कोई कहे कि राधास्वामी दयाल की बानी में जहां तहां महिमा संत सतगुरु स्वरूप की कही है, और यह कि जब तक कि गुरु स्वरूप में पूरा प्यार नहीं आवेगा तब तक शब्द यानी निज स्वरूप की प्राप्ती नहीं होगी, यह बचन सच्च है। लेकिन समझना चाहिये, कि ऐसा भाव और प्यार गुरु स्वरूप में, जब तक कि सतसंग और अभ्यास करके, कुछ अंतर में रस नहीं मिलेगा और थोड़ी बहुत पहिचान नहीं आवेगी, नहीं आवेगा और जब तक कि ऐसी हालत न होवे तब तक बदस्तूर मुख्यता प्रेम और प्रीत की कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों मे करना चाहिये॥

७९–संत मत में प्रेम की भारी महिमा है, और सबब उसका यह है, कि जहां जिसका सच्चा और पूरा प्रेम है वहीं उसका तन मन धन सहित झुकाव होता है। और या तो वह आप चलके प्रीतम से मिलता है, या प्रीतम उसको आप बुला लेता है, या आपही चलकर उस्से मिलता है॥

८०–परमार्थ में जब किसी का सच्चा प्रेम, महिमा सुन कर और जगत और उसके पदार्थों की नाश-मानता देखकर, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में आया तब राधास्वामी दयाल दया करके अपने पुत्र यानी निज धारा के वसीले से, आप उस प्रेमी को चरनों में लगाते हैं और रास्ते का भेद देकर उसको निज धाम में बुलाने और पहुंचाने के निमित्त जुगती के साथ अभ्यास कराते हैं। यह पुत्र यानी निज धारा का स्वरूप उन्हीं का देह स्वरूप है और इसका और उनका निज स्वरूप एकही है। लेकिन जो कि देह स्वरूप की पहिचान कठिन है, इस सबब से प्रथम निज रूप की महिमा प्रेमी के हृदय में बसा कर, उसी में उसकी प्रीत और प्रतीत लगाते हैं। और उसी स्वरूप से मिलने का जतन यानी सुरत शब्द मारग का अभ्यास कराते हैं॥

८१–निज स्वरूप की महिमा और बड़ाई हर हालत में ज़्यादा से ज़्यादा है, और प्रेमी का बग़ैर उस स्वरूप की प्राप्ती के कारज पूरा नहीं बन सक्ता है। इस वास्ते जो काररवाई मुवाफ़िक़ ऊपर के दफ़ा के उससे शुरू कराई गई, वह हर हालत में दुरुस्त है॥

८२-लेकिन जो कि प्रेमी संसारी रूपों में पहिले से

लगा हुआ और अटक रहा है और कुल्ल मालिक के निज रूप को न तो देखा है और न उसका सतसंग के वचन सुनकर, अच्छी तरह अनुमान कर सक्ता है, इस वास्ते जैसा चाहिये उस में प्यार नहीं आ सक्ता ॥

८३--पर उसी निज स्वरूप का जो देह स्वरूप यानी संत सतगुरु रूप है वह उन्हीं रूपों के मुवाफ़िक़ है, जिन में प्रेमी अपने स्वभाव के मुवाफ़िक़ संसार में प्रीत लगाता आया है। इस सबब से जो थोड़ी बहुत भी पहिचान संत सतगुरु की आजावे, तो वह प्रेमी उनके स्वरूप में विशेष प्यार आसानी से ला सक्ता है और अनेक तरह की सेवा तन मन धन से करके उस प्यार को बढ़ा सक्ता है। और फिर उसी स्वरूप का अंतर में अस्थान २ पर ध्यान करके, और जब तब मेहर और दया से दर्शन पाकर अपने मन और सुरत को उनके चरनों के स्पर्श करने के निमित्त सहज में चढ़ा सक्ता है और आहिस्ता २ एक दिन धुर धाम में पहुंच सक्ता है॥

८४--जिस वक़्त कि ध्यान की मदद से मन और सुरत सिमटकर किसी अस्थान पर पहुंचेंगे या जम जावेंगे तब शब्द भी साफ़ सुनाई देवेगा और उस की धुन को पकड़ के सुरत जल्द चढ़ेगी ॥

८५—नीचे के अस्थानों यानी षट चक्र में सिमटाव और चढ़ाई बग़ैर मदद और ध्यान गुरु स्वरूप के किसी क़दर मुमकिन है, यानी वहां ध्यान मुक़ामी स्वरूप का किसी क़दर काम दे सक्ता है। लेकिन ऊंचे मुक़ामों की चढ़ाई सिर्फ़ शब्द के आसरे बग़ैर मदद गुरु स्वरूप के मुशकिल है॥

८६—जो कोई कहे कि गुरु स्वरूप नाशमान है उस का ध्यान करना फ़ज़ूल है और वह पूरा फ़ायदा नहीं देगा उसका यह जवाब है, कि जो आकार गुरु स्वरूप का प्रेमी ध्यानी के अंतर में प्रगट होगा और होता है, वह स्वरूप चेतन्य अन्तरजामी आप धारन करता है और जो कि चेतन्य अबिनाशी है और प्रेमी ध्यानी के सदा संग है, इस वास्ते वह स्वरूप भी अबिनाशी और सदा ध्यानी के संग रहेगा। जहां तक कि रूप और आकार की रचना है और जहां से कि अरूपी कारख़ाना शुरू हुआ है, वहां तक वही स्वरूप प्रेमी को पहुंचा देगा, और अरूप से मिला देगा। और जिस क़दर कि चढ़ाई रास्ते में होती जावेगी, उसी क़दर वह आकारी स्वरूप झीना और सूक्षम, और ज्यादा से ज्यादा नूरानी होता जावेगा, और एक दिन अरूप से मिलाकर छो-

ड़ेगा । और वहां पर सतगुरु का आकारी स्वरूप और उनका निज रूप (जो अरूप है) और प्रेमी सेवक का रूप भी, जो ऊंचे देश में चढ़ाई के साथ सूक्ष्म और नूरानी होता चला गया है, सब एक यानी अरूप हो जावेंगे । और फिर निराकार यानी अरूपी स्वरूप से, यह प्रेमी सेवक अपने कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शनों के आनन्द और विलास को प्राप्त होगा॥

८७-इस तौर से सतगुरु स्वरूप में प्रेम और प्रीत लगाने से, बहुत जल्द प्रेमी का बंधन बाहर के रूपों से ढीला और कम हो जाता है । और अंतर में चढ़ाई निज रूप से चलकर मिलने के निमित्त आसान हो जाती है ॥

८८-लेकिन हर सूरत और हालत में, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके निज स्वरूप की (जो कि अथाह और अपार और अनंत और प्रेम और ज्ञान का भंडार है) महिमा और बड़ाई, और मुख्यता भक्ति भाव की अंतर और बाहर बर्ताव में, बदस्तूर जारी रहेगी । क्योंकि वही सतगुरु का निज स्वरूप है और सेवक के पहुंचने का निज धाम है, यानी वहीं जाकर उसकी भक्ती पूरन होगी, और वहीं उसको पूरन और अमर आनंद प्राप्त होगा ॥

भाग दसवां

क़िस्म दूसरी—जवाब बाज़ तरकों का जो कोई २ सतसंगी और दुनियां के लोग निस्बत बर्तावे समाध और तसवीर राधास्वामी महाराज के करते हैं ॥

८९—कोई २ सतसंगी और मूरत पूजा वाले ऐसी तर्क करते हैं, कि राधास्वामी बाग़ में जो समाध और तसवीर पर हार फूल चढ़ाये जाते हैं, और परशाद भेंट भी रक्खा जाता है, यह काररवाई मूरत पूजा वालों के मुवाफ़िक़ है सो यह कहन और समझ उनकी बिल्कुल ग़लत है। यहां यह काररवाई निशान सिर्फ़ अदब और प्यार का है क्योंकि जो नये सतसंगी राधास्वामी मत के आते हैं, वह बहुत शौक़ के साथ देखना चाहते हैं, कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का कैसा स्वरूप था, और वे तसवीर का दर्शन करके बहुत खुश होते हैं। और जो राधास्वामी दयाल के चरनों में भाव और प्यार के सबब से, उमंग सेवा की उनके मन में पैदा होती है, तब वे हार और फूल और शीरीनी और नक़द वग़ैरः

वहां पेशकश करते हैं, यानी सन्मुख रखते हैं। हार और फूल उलटकर चढ़ाने वालों को दे दिया जाता है, और शीरीनी साधुओं और सतसंगियों को वहीं तक़सीम कर दी जाती है, और नक़द रुपया साधुओं और बाग़ के ख़र्च में आता है॥

९०—आम तौर पर मन का ख़वास है कि जिस किसी की परमार्थ में या दुनियां में बड़ाई और महिमा सुने तो उसके दर्शनों की उमंग और चाह उठाता है। और जो वे उस वक़्त मौजूद न होवें, तो उनकी तसवीर या निशान के देखने को चाहता है, और उसको देखकर बहुत मगन होता है॥

९१—अब ख़्याल करो कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शनों की, या उनकी तसवीर या निशानों के देखने की, किस क़दर अभिलाषा सतसंगी के दिल में (कि जिसने उनके निज स्वरूप का इश्क़ धारन किया है और उनके निजधाम में पहुंचना चाहता है) पैदा होनी चाहिये। और जब वह इस इरादे से शहर आगरे में पहुंचकर, राधास्वामी बाग़ में (जहां कि महाराज कुछ अर्से तक रहे) जाता है, और उनकी यादगार समाध और तसवीर और पलंग और भजन करने की चौकी और खड़ाऊं वग़ैरह का दर्शन

करता है उस वक़्त उसका चित्त निहायत मगन होता है, और उसके मन में भाव और प्यार ज़्यादा पैदा होता है। और जैसे कि कोई अपने प्यारे से मिलने को जावे उस वक़्त कोई चीज़ उमदा या तोहफ़ा उसके लायक़ ले जाता है। वैसेही यह प्रेमी अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ भेंट और शीरीनी और हार फूल वग़ैरह पेश करता है। और जो उमंग ज़्यादा है, तो जिस क़दर बन सके उस मकान की और भी साधुओं की जो वहां रात दिन रहते हैं तन की सेवा करके, अपना परमार्थी भाग बढ़ाता है॥

९२—क्योंकि जब राधास्वामी दयाल सर्व समरत्थ और कुल्ल मालिक हैं, और वक़्त छोड़ने चोले के उन्होंने अपनी ज़बान मुबारक से फ़रमाया, कि हम बराबर निगरानी सतसंगियों की रक्खेंगे। तो जो कोई उनके चरनों में भाव और प्यार लाता है, या उनकी महिमा सुनकर उमंग के साथ कोई सेवा करता है, तो वे ज़रूर उस पर थोड़ी बहुत दया फ़रमावेंगे यानी उसको भक्ती और प्रेम दान देंगे॥

९३—इस क़िसम का बर्ताव मूरत पूजा में किसी तरह दाख़िल नहीं हो सक्ता। हर मुल्क में और हर शहर में हर एक अपने २ प्यारे रिश्तेदार या दोस्त

की यादगार या निशान या तसवीर को बारम्बार देखना चाहता है, और उसकी समाध या क़बर पर वक़्त़न फ़वक़्त़न, हार फूल और उमदा चीज़ खाने पीने की पेश करता है यानी चढ़ाता है। फिर जो परमार्थी लोगों ने अपने मत के आचार्य की तसवीर या निशान या समाध के साथ ऐसी काररवाई करी तो क्या अचरज है, और वह किस तरह मूरत पूजा में दाख़िल हो सक्ती है। ख़ासकर जब कि वहीं बाग़ में सतसंग मौजूद है, और मूरत पूजा वग़ैरह का बराबर खंडन होता है, और भी बानी में जा बजा शब्द और सतगुरु वक़्त की भक्ती का हुकूम है॥

९४—लोग अपनी अनसमझता और अबिचारता से तर्क और तान और ठठोली की बातें करते हैं। और जो वे ज़रा भी ग़ौर करें और दुनियां के और मन के हाल पर नज़र करें तो उनको साफ़ मालूम होवेगा, कि वह काररवाई जो महाराज राधास्वामी की समाध और तसवीर और निशानों वग़ैरह की निसूबत जारी है वह ज़हूरा और निशान सिर्फ़ प्रेम और भाव और अदब का है। और असली कार-रवाई परमार्थ की यानी सतसंग और शब्द का अ-भ्यास, और जो सतगुरु या साध मिल जावें, तो उनकी

पूजा और सेवा, और राधास्वामी दयाल की बानी का समझ २ कर पाठ, और उनके बचनों का मनन बदस्तूर जारी है, फिर ऐसी जगह मूरत पूजा का कहां दख़ल हो सक्ता है ॥

९५–मालूम होवे कि एक मकान ख़ास कर राधास्वामी मत के अचारज और प्रगट करने वाले सहज जोग, यानी सुरत शब्द अभ्यास के नाम से तैयार होना निहायत ज़रूर और मुनासिब मालूम हुआ ताकि कुल सतसंगी हर एक देश के (जोकि राधास्वामी मत में शामिल होवें) एक जगह ख़ास पर यानी सदर मुक़ाम जहां कि राधास्वामी दयाल प्रगट हुये, किसी वक़्त मुअइना पर जमा होकर आपस में मिलते रहें और एक दूसरे की हालत प्रेम और भक्ती और अभ्यास की देखकर परसपर फ़ायदा उठावें, और राधास्वामी मत के तअ़ल्लुक़ जो किसी को कुछ दरियाफ़्त करना या कहना होवे, वह एक जगह बैठकर उसका तज़किरा करें। और अपनी २ आज़मायश और तजरबा का हाल थोड़ा बहुत मुनासिब तौर पर ज़ाहिर करके, एक दूसरे की प्रीत और प्रतीत बढ़ावें, और आपस में मुहब्बत और इत्तफ़ाक़ परमार्थी भाई चारे का पैदा होवे। और सब कोई

अपने २ मुवाफ़िक़ इस भारी और सहज और अनउपमा जोग मत और अभ्यास के प्रकाश करने, यानी अधिकारी जीवों के समझाने बुझाने में मदद देवे। और ऐसा मकान सिवाय राधास्वामी बाग़ के, जहां राधास्वामी दयाल कुछ अर्से तक आप रहे, और वहीं उनकी समाध बतौर यादगार बनाई गई है, और उनकी तसवीर और निशानात वग़ैरह मौजूद हैं, दूसरा नहीं हो सक्ता॥

९६—इस वास्ते मुनासिब है कि कुल सतसंगी वक़्त मेले के (जो बिलफ़ेल साल भर में एक मर्तबा होता है) या दो साल में एक मर्तबा या साल भर में चंद बार, जब २ जिसको मौक़ा मिले आगरे में आकर ज़रूर दर्शन समाध व तसवीर व निशान वग़ैरह का करें और सतसंग में जो हर रोज़ जारी है शामिल होकर अपने संसय और भरम दूर करावें, और प्रीत और प्रतीत बढ़ावें, और अभ्यास में मदद लेवें। क्योंकि बग़ैर सतसंग के अहंकार और मूर्खता और विपरीत दूर नहीं हो सक्ते, और न अंतर अभ्यास में जैसा कि चाहिये तरक़्क़ी मुमकिन है। और न आपस में हर मुल्क और शहर के सतसंगियों में भाव और प्यार पैदा हो सक्ता है॥

भाग दसवां

क़िस्म तीसरी–बाज़े सतसंगियों की अन्-जानता की बोल चाल और समझौती का वर्णन और उनको नसीहत ॥

१७–ऐसे सतसंगी कि जो संत सतगुरु से मिलें, और उनके चरनों में थोड़ी बहुत पहिचान करके उन का भाव और प्यार आवे बहुत कम होंगे। और जो उन में से कोई ऐसा कहें या ख्याल करें, कि हम को सतगुरु वक्त मिलगये और अब कोई ज़रूरत किसी के मानने की नहीं रही यह कहन उनकी अनसमझता की है। क्योंकि जब वह पहिले सतसंग में आये और उपदेश लिया, उस वक्त तो उनको सतगुरु में वैसा भाव (कि जो सतसंग और अभ्यास करके कोई दिन में पैदा हुआ) नहीं था, और उस वक्त वे कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के निज स्वरूप में जो कि अपार और अनंत है, भाव और प्यार लाकर राधास्वामी मत में शामिल हुये ॥

फिर रफ़ा २ सतसंग और अभ्यास करके और घट में परचे पाकर उनकी समझ बढ़ेगी, यानी सतगुरु को राधास्वामी दयाल का निज पुत्र और मंज़ूर नज़र

यानी प्यारा मानने लगे । और किसी २ ने ऐसी समझ धारन की कि सतगुरु राधास्वामी दयाल के देह स्वरूप हैं, और राधास्वामी पद उनका निज रूप और निज धाम है । इन दोनों सूरतों में निज स्वरूप राधास्वामी दयाल की महिमा और बड़ाई बदस्तूर रही, यानी वह पिता और भंडार स्वरूप हुआ, और देह रूप निज धार और पुत्र स्वरूप हुआ । फिर जब कि इन दोनों स्वरूप की महिमा और बड़ाई, सतसंगी के हिरदे में समझ बूझ के साथ बस गई और जो वह समझदार और विचारवान है, तो राधास्वामी दयाल के उस देह स्वरूप की जो उन्हों ने प्रथम धारन करके राधास्वामी मत और उसकी नवीन और सहज जुगत को प्रगट किया वैसी ही महिमा और बड़ाई समझकर, प्रीत भाव उनके चरनों में लावेगा, जैसा कि अपने वक़्त के सतगुरु के देह स्वरूप में लेकिन जो कि वह स्वरूप उसके सामने प्रगट नहीं है यानी गुप्त हो गया, इस वास्ते जो उसकी यादगार और बानी बचन या निशान या तसवीर मौजूद है, तो उसको उसी नज़र, भाव और अदब और प्यार से देखेगा । और उसके साथ वैसाही बर्ताव करेगा, जैसे कि वक़्त के सतगुरु की तसवीर और उनके बैठने और पहिरने और बर्तने की चीज़ों

से बर्तता है क्योंकि निज रूप दोनों देह स्वरूपों का एकही है, और वह अमर और अजर और सदा एक रस मौजूद है, देह स्वरूप जुदा २ होंगे पर जो शब्द कि उन में व्यापक है वह हमेशा एकही है फिर जो किसी देह स्वरूप का कोई निरादर करेगा, या उसको ओछा समझेगा तो गोया उसने निज रूप का निरादर किया और उस को ओछा समझा। फिर ऐसी समझ से दूसरा देह स्वरूप जिस में वही निज रूप यानी शब्द मौजूद है कैसे उस से राज़ी होगा॥

ऐसी समझ और ऐसा बर्ताव ज़ाहिर करता है कि उस सतसंगी को पहिचान और समझ संत सतगुरु और उनके निज रूप की जैसा कि चाहिये बिलकुल नहीं आई, नहीं तो वह एक देह स्वरूप का आदर और दूसरे देह स्वरूप का निरादर न करता, यानी दोनों स्वरूप में किसी तरह का भेद और फ़र्क़ न समझता बल्कि जोकि संत सतगुरु बनाये हुए उस आदि स्वरूप या भेजे हुए निज रूप के हैं, तो वह आदि देह स्वरूप और निज स्वरूप दोनों पिता के स्वरूप हुए। और मौजूदा स्वरूप संत सतगुरु का पुत्र रूप हुआ, तो हर सूरत और हालत में पिता रूप की महिमा और आदर ज्यादा चाहिये न कि कम। और

जो कोई एकताई समझे तो भी दोनों में भाव और प्यार बराबर होना चाहिये। और जो कोई कमी करे तो उसकी समझ ओछी और ग़लत है॥

९८—यह बात सही है कि ऐसा बर्ताव जैसा कि ऊपर लिखा गया, वक़्त मौजूदगी दोनों स्वरूप के हो सक्ता है और जब कि कोई स्वरूप गुप्त हो गया, तब उसके साथ बर्ताव भी बन्द हो गया। लेकिन उस स्वरूप के तसवीर या बानी बचन या कोई यादगार में वैसाही बर्ताव, प्यार और अदब के साथ किया जावेगा, जैसा कि मौजूदा सतगुरु के तसवीर और बानी बचन और कारआमद चीज़ों में किया जाता है॥

९९—निज रूप की महिमा और बड़ाई भारी है और हमेशा एक सी रहेगी, और कुल्ल जीव पहिले उसी में प्रीत और प्रतीत लाकर राधास्वामी मत में शामिल होवेंगे और पीछे आहिस्ता २ थोड़ी बहुत पहिचान सतगुरु स्वरूप की करते जावेंगे और उसी मुवाफ़िक़ उस में भाव और प्यार लाते जावेंगे। और जब तक कि पूरी पहिचान नहीं आवेगी, तब तक पूरी प्रीत और प्रतीत बदस्तूर निज स्वरूप की की जावेगी। और जो कि कुल सतसंगियों का निशाना और पहुंचने और बिसराम करने का धाम, वही निज

स्वरूप यानी राधास्वामी पद है, इस वास्ते उसकी प्रीत और प्रतीत कभी घट नहीं सक्ती। और सतगुरु रूप की प्रीत और प्रतीत में मुवाफ़िक़ हर एक सतसंगी की समझ बूझ और पहिचान और परचों के हमेशा फ़रक़ रहेगा, यानी कुल्ल सतसंगियों की प्रीत प्रतीत में बहुत से दरजे होंगे। फिर जो कोई अपनी प्रीत प्रतीत को सिर्फ़ सतगुरु के स्वरूप पर ख़तम करे, यह मुनासिब नहीं है। निज स्वरूप और देह स्वरूप का भेद हमेशा रहेगा। और शब्द स्वरूप की महिमा देह स्वरूप से ज़्यादा समझनी चाहिये और जब कोई पूरी समझ लेकर इन दोनों की एकताई करे तो भी उसकी बोल चाल ऐसी होनी चाहिये, कि जिस में किसी स्वरूप का निरादर या ओछापन न पाया जावे और मुख्यता हर हाल में शब्द स्वरूप की रहेगी। पर जब तक कि देह स्वरूप मौजूद है ज़ाहिर में उस की मुख्यता और अंतर में शब्द स्वरूप और भी देह स्वरूप की मुख्यता (जहां तक कि देह स्वरूप की पहुंच है) करे तो दुरुस्त है । जैसा कि इस शब्द में राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है॥

शब्द

गुरू मोहिं अपना रूप दिखाओ ॥ टेक ॥

यह तो रूप धरा तुम सरगुन । जीव उबार कराओ ॥१॥
रूप तुम्हारा अगम अपारा । सोई अब दरसाओ ॥२॥
देखूं रूप मगन होय बैठूं । अभय दान दिलवाओ ॥३॥
यह भी रूप पियारा मोको । दूसही से उसको समझाओ ॥४॥
बिन इस रूप काज नहिं होई । क्योंकर वाहि लखाओ ॥५॥
तातें महिमा भारी इसकी । पर वह भी लखवाओ ॥६॥
वह तो रूप सदा तुम धारो । याते जीव जगाओ ॥७॥
यह भी भेद सुना मैं तुम से । सुरत शब्द मारग नित गाओ ॥८॥
शब्द रूप जो रूप तुम्हारा । वामें भी अब सुरत पठाओ ॥९॥
डरता रहूं मौत और दुख से । निरभय कर अब मोहिं छुड़ाओ ॥१०
दीन दयाल जीव हितकारी । राधास्वामी काज बनाओ ॥११॥

१००—जो कि पूरे प्रेमी सतसंगी जिनको वक़्त के संत सतगुरु स्वरूप में पूरा भाव आया है बहुत कम होंगे और बाक़ी दरजे बदरजे अपनी २ प्रतीत के मुवाफ़िक़ सतगुरु में भाव और प्यार लावेंगे । और बाज़े नवीन सतसंगी, उनको सिर्फ़ उपदेश करता और साधना करनेवाले ख़्याल करके उसी मुवाफ़िक़ उनको बड़ा मानेंगे और पूरा भाव निज स्वरूप यानी राधास्वामी दयाल के चरनों में लावेंगे इस वास्ते अव्वल दरजे के सतसंगियों को मुनासिब और लाज़िम है, कि अपनी बोल चाल और ज़ाहिरी बर्ताव, निस्बत

राधास्वामी दयाल के आदि स्वरूप और उसके निशान और यादगार वग़ैरह, और वक़्त के सतगुरु के स्वरूप और सामान वग़ैरह में इस तौर पर दुरुस्त रक्खें जैसा कि ऊपर बयान हुआ है। और एक अंगी पन की बातें हर एक के रूबरू न करें, और ऐसा एक अंगीपन इख़्तियार न करें, जिस में किसी स्वरूप का निरादर या ओछापन पाया जावे॥

अपने वक़्त के सतगुरु स्वरूप में उनको इख़्तियार है, चाहें जिस क़दर भाव और प्यार लावें, और उमंग के वक़्त चाहें जैसी सेवा करें। मगर इस क़दर होशियारी रक्खें, कि किसी हालत और किसी सूरत में, आदि देह स्वरूप या निज स्वरूप राधास्वामी दयाल के आदर भाव और महिमा में फ़र्क़ न आवे और न किसी तरह पर उनका निरादर ज़ाहिरी बर्ताव में पाया जावे इस में उन सत संगियों को निज स्वरूप और आदि देह स्वरूप और मौजूदा सतगुरु स्वरूप की दया और मेहर बराबर प्राप्त होगी। नहीं तो बेपरवाही और बेअदबी की बोल चाल और बर्ताव में, वह किसी न किसी स्वरूप की दया से महरूम रहेंगे, और उनकी भक्ती में भी थोड़ा बहुत ख़लल पड़ेगा,

और समझ बूझ भी उनकी किसी क़दर ओछी और नादुरुस्त रहेगी ॥

१०१-- खुलासा यह है कि सच्चे प्रेमी सतसंगी और कुल्ल सतसंगियों को, चाहें वे जिस दरजे के होवें आपस में मेल मिलाप रखना चाहिये। और सब को एकही इष्ट कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के निज स्वरूप का धारन करना मुनासिब है। और सबको वक्त के संत सतगुरु में अपनी २ समझ और प्रतीत के मुवाफ़िक़ भाव और प्यार और अदब के साथ बर्ताव करना चाहिये। और जो गृहस्थ या विरक्त संतसंगी उपदेशक होवें (बशरते कि वे खुद मतलबी और मानी और अहंकारी न हो जावें) उन में भी मुवाफ़िक़ हर एक के दरजे के, प्रीत भाव के साथ बर्ताव चाहिये क्योंकि जो सब का इष्ट एकही यानी राधास्वामी दयाल हैं और सब का निज घर भी एकही यानी राधास्वामी धाम है, और सब का असली उपदेशक वही बानी और बचन राधास्वामी दयाल के हैं तो सब का आपस में इत्तफ़ाक़ और दिली मुहब्बत और प्यार होना चाहिये ॥

ज़ाहिरी उपदेश चाहे जिससे हासिल किया होवे पर हिदायत और तालीम और जुगत और अभ्यास तो सब का एकही होगा। इस वास्ते कुल्ल उपदेशक

और उपदेशियों को, राधास्वामी दयाल के दरबार में प्यार भाव के साथ मिलना चाहिये। और इसी तरह से जहां कहीं जिस किसी का इत्तफ़ाक़ से मेला हो जावे तो हर एक सतसंगी को मुनासिब है, कि एक दूसरे के साथ मुहब्बत से पेश आवे, और परमार्थी भाईचारे के मुवाफ़िक़ बर्ताव करे। और ईर्षा और विरोध और खुद मतलबी को अपने मन में दख़ल न देवे, क्योंकि यह दस्तूर और आदत संसारी जीवों की है और सच्चे परमार्थियों का स्वभाव उनसे जुदा होना चाहिये, यानी आम तौर पर उनके मन में सफ़ाई और प्यार और दया, सतसंगी भाइयों पर ख़ास कर और कुल्ल जीवों की तरफ़ आम तौर से बग़ैर लिहाज़ क़ौम और मज़हब और देश और रंग रूप के जारी होना चाहिये॥

भाग ग्यारहवां

वर्णन कैफ़ियत कुल्ल मालिक के औतार स्वरूप की और उसकी ज़रूरत॥

१०२—बाज़े अपनी अनजानता और ओछी समझ के मुवाफ़िक़ ख़याल करते हैं, कि औतार स्वरूप कुल्ल

मालिक नहीं हो सक्ता या यह कि कुल्ल मालिक देह स्वरूप में नहीं समा सक्ता यह समझ उनकी दुरुस्त नहीं है, जैसा कि इस दृष्टान्त से ज़ाहिर होता है।

दृष्टान्तः— जिस वक़्त कि समुद्र में जुवारभाटा आता है, यानी उसकी लहर उठकर समुद्र से सौ २ कोस तक बराह दरिया बढ़ती चली जाती है, और कुछ अर्से ठहर कर फिर समुद्र में लौट आती है। तो जिस क़दर देर तक वह लहर सौ कोस में फैली रही, वह समुद्र की लहर कहलाती है, यानी खुद समुद्र वहां मौजूद है। और अपने समुद्र रूप से (जोकि बहुत बड़े हिस्से ज़मीन को घेरे हुये है) जुदा नहीं और सिमटकर फिर वही समुद्र रूप हो जाती है। इसी तरह औतार स्वरूप कुल्ल मालिक की लहर हैं, कि जो उस अपार सिंध स्वरूप चेतन्य से निकलकर, और ब्रह्माण्ड में होकर पिंड में आकर ठहरी। और जिस क़दर अर्से तक उसका पिंड में ठहराव रहा, वह लहर अपने सिंध स्वरूप से जुदा नहीं हुई, और रात दिन में चंद बार (अभ्यास के वक़्त) सिमट कर सिंध स्वरूप में उलटकर समा जाती है। और फिर उत्थान करके और ब्रह्माण्ड में रवां होकर पिंड में ठहर जाती है, इस हालत में यह लहर रूप

कभी पिंड के मुवाफ़िक़ महदूद नहीं होता हमेशा सिंध के साथ उसका मेल और सिंध के मुवाफ़िक़ अपार और अनंत रहता है ॥

१०३-इस दृष्टान्त से साफ़ ज़ाहिर है, कि लोगों की समझ निस्बत महदूद होने कुल्ल मालिक सिंध स्वरूप के, बसबब फैलने यानी उतर आने उसकी लहर के पिंड में सही और दुरुस्त नहीं है। यह कलाम आम जीवों की निस्बत सही हो सक्ता है, कि उनकी धार जो सिंध से रवां होकर पिंड में आकर ठहरी वह अपने आप से उलट नहीं सक्ती, यानी सिंध स्वरूप से मिलकर सिंध रूप नहीं होती । लेकिन औतार स्वरूप की निस्बत ऐसा ख्याल करना ग़लत है क्योंकि उनके सब पट खुले होते हैं, और छिन भर में वह लहर या धारा सिंध स्वरूप, और कभी पिंड में धार रूप होती रहती है और कभी सिंध से जुदा नहीं होती यानी उसके और सिंध के बीच में, कोई पट या परदा हायल नहीं होता है ॥

१०४-ऐसा औतार स्वरूप जब कभी प्रगट हुआ, वह गोया कुल्ल मालिक ने आप नर रूप धारन किया, फिर उस स्वरूप की और कुल्ल मालिक की महिमा बराबर है। लेकिन इस औतार स्वरूप की पहिचान

कठिन है। जीवों की क्या ताक़त है कि वे अपनी महदूद और ओछी समझ से, इस औतार स्वरूप की गत मत जान सकें। यह पहिचान थोड़ी बहुत उसको आवेगी, कि जो उनका कोई काल प्रीत भाव के साथ संग करेगा। और उनकी जुगती का उन से उपदेश लेकर, उसकी थोड़ी बहुत अंतर में कमाई करके, उन की कुदरत और दया की अपने घट में परख करेगा।- या उसको थोड़ी बहुत पहिचान आवेगी, कि जिसको वे अपनी दया से आप बख़्शिश फ़रमावें॥

आम तौर पर वे देह में बैठकर जीवों के मुवाफ़िक़ बर्ताव करते हैं, और अपनी कुदरत और ताक़त का मुतलक़ दिखावा नहीं करते, और न किसी को जताते हैं कि वे कौन हैं। फिर जीवों की क्या ताक़त कि उनकी गत को जान सकें॥

१०५–जो कोई कहे कि मालिक को औतार लेने की क्या ज़रूरत और जो उसने औतार लिया यानी पिंड में आन समाया, तो क्या निज अस्थान ख़ाली हो गया॥

जवाब इसका यह है कि जुवार भाटे के वक़्त जब समुद्र लहर रूप होकर, सौ २ कोस तक अपने किनारे से दूर चला गया, तो क्या उसका समुद्र रूप ख़ाली हो

गया या कहीं जाता रहा। नहीं वह दोनों जगह एक ही वक़्त में बराबर मौजूद है, उसका निज रूप न घटा न बढ़ा। इसी तरह औतार स्वरूप का हाल समझना चाहिये कि उसका दोनों हालत में सिंध स्वरूप एकसां क़ायम रहता है॥

१०६—और औतार स्वरूप की ज़रूरत की वजह यह है, कि कुल्ल मालिक का निज भेद कोई नहीं जान सक्ता, जब तक कि वह आप न जनावे। और जो भक्ती रीति कि उस मालिक ने संत रूप धरकर आप जारी फ़रमाई, उस्से भी सब जीव बेख़बर हैं, वह रीति भी वह आपही जारी फ़रमाता है। और जो कि निज रूप से यह काररवाई दुरुस्त नहीं हो सक्ती, यानी उसकी अंतरी हिदायत और उपदेश को कोई नहीं सुन सक्ता है, या समझ सक्ता है, और न जीव को यह ख़बर पड़ सक्ती है, कि अंतर में कौन बोलता है, और न किसी बचन की (बग़ैर पहिले उपदेश और हिदायत ज़ाहिरी स्वरूप से पाने के) समझ आ सक्ती है। क्योंकि जितने मत दुनियां में ज़ारी हैं उनके आचारज टटोलवां चले, यानी निज भेद से उस अस्थान और उसके धनी के, जहां तक कि उनकी पहुंच हुई वाक़िफ़ न थे, दुनियां में पैदा होकर और भेदी यानी गुरू से मिलकर

उनको ख़बर पड़ी, और फिर अभ्यास करके और मन माया के बहुत से झकोले खाकर, उनको उस पद की प्राप्ती हुई। तब उन्होंने उसी पद की भक्ती और पूजा, या उसके ज्ञान यानी समझ बूझ का अपने साथियों को, जिन्होंने उनका बचन माना उपदेश किया। और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का देश और भेद किसी ने न जाना, क्योंकि सब मतों के आचारज किसी न किसी अस्थान पर माया की हद्द में रहे। और सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल का भेद और देश का हाल, और वहां पहुंचने का तरीक़ा, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने आप इस दुनियां में औतार स्वरूप धरकर प्रगट किया और जिन जीवों ने उनका बचन माना, उनको अपने चरनों की भक्ती की रीति समझाई और उस की कार-रवाई आप करवाई, और अपने चरनों के प्रेम की दात आप बख़्शिश करी॥

१०७—जीवों की सुरत यानी रूह इस क़दर पिंड में नीचे उतर गई है, कि वे कुल्ल मालिक के निज रूप का बचन नहीं सुन सक्ते और न समझ सक्ते हैं और जो फ़र्ज़ किया कि किसी तरह से कोई बचन उतर कर सुनाया भी जावे, तो उसमें अनेक तरह

के संसय और भरम पैदा करके उसकी प्रतीत नहीं करते और न उसके मुवाफ़िक़ काररवाई करने को तैयार हो सक्ते हैं। इस वास्ते जब कि कुल्ल मालिक ने देखा कि सब जीव माया के घेर में कहीं न कहीं अटक रहे, और निज घर का भेद न पाकर उससे बिल्कुल बे ख़बर रहे, और वहां कोई न जा सका और न रास्ता वहां पहुंचने का किसी को मालूम पड़ा। तब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने अति दया करके आप संत रूप धारन किया, और अपना निज भेद और निज घर में पहुंचने का तरीक़ा आप प्रगट किया। अब जीवों को चाहिये कि राधास्वामी दयाल के बानी और बचन को अच्छी तरह से समझ कर मानें, और उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करें, और चरनों में निच्त सतसंग और अभ्यास करके प्रीत और प्रतीत बढ़ाते रहें। तो राधास्वामी दयाल की दया से एक दिन उनका कारज दुरुस्त बन जावेगा, यानी माया के घेर से निकलकर निज घर यानी दयाल देश में बासा पावेंगे, और अमर आनंद को प्राप्त होवेंगे। और जो ऐसा न करेंगे तो माया के देश में बारम्बार किसी न किसी क़िस्म की देह धरकर, दुख सुख भोगते रहेंगे, और कभी सच्चा उद्धार

उनका नहीं होगा, यानी दयाल देश में नहीं जाने पावेंगे, और न पूरन और अमर आनंद को प्राप्त होंगे॥

१०८—जिन जीवों को कि संत सतगुरु अपनी दया से सत्तपुर्ष राधास्वामी देश में पहुंचावें, वह जीव फिर उलटकर इस देश में नहीं आ सक्ते । क्योंकि वहां का आनन्द और बिलास ऐसा गहरा और भारी है कि वह उनसे छोड़ा नहीं जा सक्ता, और फिर माया देश की तरफ़ उनकी तवज्जह नहीं होती ॥

१०९—जो कोई पूछे कि ब्रह्म पद का भी औतार स्वरूप प्रगट होता है या नहीं, तो जवाब उसका यह है कि हां होता है । क्योंकि जो ऐसा न होता तो ब्रह्म पद का भी भेद पूरा २ किसी को मालूम न होता । जब २ ब्रह्म ने औतार जोगी और जोगेश्वर रूप का धारन किया, तब २ उस पद का भेद और उस रचना का हाल, जो उसके नीचे है प्रगट किया और गुरुवाई की चाल चलाई । और मालूम होवे कि पूरन औतार ब्रह्म का कभी २ होता है पर कलायें उस मुक़ाम से अक्सर प्रगट होती रहती हैं, और रचना की सम्हाल करती रहती हैं ॥

११०—और मालूम होवे कि संत अक्सर रचना में प्रगट होते रहते हैं, पर गुप्त रहते हैं । और जब

तक कि राधास्वामी दयाल की मौज न होवे सतसंग खड़ा नहीं करते, और न आम तौर पर उपदेश संत मत का करते हैं ॥

१११--संत सतगुरु को इख़्तियार है कि जिस को वे पसंद करें, सतसंग और भक्ती कराकर संत बना देवें । जिस पर ऐसी कृपा होवे वही वड़ भागी है ॥

इति